चन्दामामा
नवम्बर १९९१
4
रु

चिड़िया चोरों

पहले देवद्वीप के रहस्य का हल. क्या वो चोर हो सकते थे यारों के मनचाहे अंकल? वे कहां जाते. सबूतों से कैसे बच पाते. तो अब राज़ ढूंढने वाले यार क्या कर रहे हैं विचार? बच्चों की चहेती मनोरंजन पार्क की गानेवाली चिड़िया ने एक दिन अचानक गाना बंद कर दिया. "एक दो तीन चार..." गाती थी हर बार. अब वो भी बंद, भूल गई छंद. राज़ ढूंढनेवाले यार पता लगाने को तैयार...

"इस गानेवाली चिड़िया की आंखें कितनी नीली और सुंदर हैं." पूजा ने उसकी तस्वीर देखी और सराहा. सबने उसे देखना चाहा.

गानेवाली चिड़िया चोरी

अपनी अपनी बीएसए-एसएलआर पर सवार यार चल पड़े उधर. गानेवाली चिड़िया का पिंजरा था जिधर. 'देखें, ये बजती है या नहीं' रैल्फ़ ने कहा और अपनी बीएसए एसएलआर की घंटी

बजाई. वह हमेशा बजी. लेकिन अब की बार नहीं, पूजा ने अचानक धीरे से कहा, "गानेवाली चिड़िया की आंखें हरी हैं. ये गानेवाली चिड़िया है ही नहीं. वो चोरी हो गई."

का रहस्य

अजनबी बोला

"क्या हुआ? एक अजनबी बोला. जब उसे बताया गया तो उसने हमदर्दी जताई और बढ़ चला अजनबी भाई. दूसरे दिन राज़ ढूंढने वाले यार अपनी अपनी बीएसए एसएलआर पर सवार निकल पड़े शहर के पार, गांव की ओर. अचानक अपनी दूरबीन से विपुल ने देखा, सामने के घर में जो आदमी घुसा वो वही अजनबी था. क्या वो एक जानी पहचानी धुन नहीं गुनगुना रहा था? और एक बात ये भी कि उसने ये भी तो कहा था कि वो इस शहर में नया था और गानेवाली चिड़िया को जानता भी नहीं था.

पीछा

फिर तो शुरू हुआ पीछा. वो डाल डाल, ये पात पात. उसके रास्ते पे इनकी बीएसए. ब्रेक लगतीं धीरे धीरे, इंतज़ार करतीं चलती रहीं इनकी बीएसए. कुछ देर बाद उस अजनबी ने ताला डाला और चला गया जानेवाला. राज़ ढूंढने वाले यार चढ़ गये ऊपर. उनका दिल भर आया देखकर भीतर. अनोखी चिड़िया पिंजरे में बंद और भूसा भरी चिड़िया अपने गंतव्य स्थान की पर्चियों संग! और फिर उनका उत्साह दुगुना जब उन्होंने गानेवाली चिड़िया का गाना सुना. बेशकीमती नन्ही गानेवाली चिड़िया. "जल्दी करो. पकड़ो धरो."

लेकिन बीएसए एसएलआर वाले यार राज़ ढूंढते हुए क्यों हुए अजनबी पर शक करने को तैयार. वही तो था चोर. दूसरे रहस्य तक चलाते रहो यार अपनी अपनी बीएसए एसएलआर.

और अब हर बीएसए एसएलआर के साथ डिस्टेंस सीकर और ब्रेकलाइट भी.

BSA SLR

पेश है नया राज कामिक्स विशेषांक
इस कामिक्स के साथ नागराज का एक मैग्नेट स्टीकर मुफ्त
नागराज! आज तेरा अन्त जापान के सूमो फाइटर वान-चिन-पोंग के हाथों होगा।
क्या नागराज को मेरी मदद की जरूरत है?
5 अक्टूबर को प्रकाशित हो रहा है
मूल्य 15/-
नागराज और सुपर कमांडो ध्रुव

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

विज्ञान और हम

"बिना विज्ञान के किसी समाज का कोई भविष्य नहीं । और विज्ञान का भी, जब तक कि यह अध्यात्म से प्रेरित न हो, कोई भविष्य नहीं ।"

ये शब्द हमारे प्रथम प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू के हैं, जो उन्हों ने आज से लगभग ३० वर्ष पहले श्रीलंका विश्वविद्यालय के विज्ञान संवर्धन संघ को संबोधित करते हुए अपने सम्भाषण में कहे थे । कितनी सच्चाई है इन शब्दों में!

विज्ञान की सबसे बड़ी खूबी यह है कि यह किसी भी बात को केवल अनुमान के आधार पर स्वीकार नहीं करता । हर बात के लिए प्रमाण जुटाने पड़ते हैं । उसे स्वीकृति तभी मिलती है जब प्रयोग करके अटकलबाज़ी की कोई गुंजाइश न छोड़ी जाये ।

यही कारण है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास ने समूचे विश्व के मानव जीवन में क्रांति ला दी है । कृषि, उद्योग, प्रतिरक्षा, स्वास्थ्य-प्रबंध —दरअसल, विश्व में मानव क्रियाकलाप के ऐसे बहुत कम ही दायरे होंगे जो इस विकास से प्रभावित न हुए हों ।

किंतु विज्ञान से चाहे हमें कितना भी लाभ पहुंचा है, यह मानव के नैतिक और आध्यात्मिक समस्याओं का कोई समाधान नहीं जुटा पाया । मानव-समाज आज भी जैसे कि अंधेरे में भटक रहा है और जानना चाहता है कि इस का भविष्य क्या होगा । इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि विज्ञान अब अंतिम सत्य की खोज करे ।

वर्ष : ४४ | नवम्बर १९९१ | अंक : ३

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

नई उमर के नये रंग
मौज ही मौज
स्कूल में आए
नए फ़ेविक्रिल
स्टूडेंट पोस्टर कलर्स
ऐसा रंग जमाएं
रंग मुलायम उभरा-उभरा
तोता-हरा-हरा लगे खरा
चटख लाल, नीला,
चमकीला
सफेद निराला
ज्यों बर्फीला
हर रंग अलबेला
तो झटपट चित्रों में रंग भरो
नए फेविक्रिल स्टूडेंट
पोस्टर कलर्स के संग
मौज करो!
देख तुम्हारा काम और
इसका दाम मम्मी हुई हैरान।
मुफ़्त
पेंट-ए-पोस्टर
पाने के लिए इस पते पर लिखें—फेविक्रिल, पो. ऑ. बॉक्स 17437
अंधेरी (पूर्व), बंबई-400 069.
नए
फ़ेविक्रिल®
स्टूडेंट
पोस्टर कलर्स
लिलिपुट
मुफ़्त
हर लिलिपुट किट
के साथ
स्टेंसिल
STUDENTS' POSTER COL
Fevicry
की ओर से
नाम :
उम्र :
पता :
स्कूल

भूमण्डल-शांति की दिशा में

दो महान शक्तिशाली देश, अमरीका और रूस, जिन के पास खतरनाक परमाणु हथियारों का समुदाय है, हाल ही में अपना संचयन कम करने के लिए राजी हुए हैं। इन्होंने ३१ जुलाई को स्ट्रैटजिक ऑर्म्स रिडक्शन ट्रीटी (स्टार्ट) नामक सहमति-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये थे जिससे पृथ्वीमण्डल से भयानक युद्ध के कुछ कदम दूर हटने का सुखद परिणाम नजर आता है।

अध्यक्ष बुश और अध्यक्ष गोर्बाचेव की आपसी भेंट यह पहली बार नहीं थी, किंतु जुलाई माह के अंतिम दो दिनों का उनका शिखर समावेश, जो मास्को में हुआ था, उन दोनों देशों के बीच पिछले पचास सालों से बढ़ती आनेवाली अविश्वास की दरारों को मिटाने वाला, तथा सारी समूची दुनिया को खतरे में डालने के काबिल भयानक अस्त्रों के निर्माण से उन दोनें देशों को काफी हद तक हटाने वाला अग्रदूत बन चुका था।

जब इन दोनों देशों के खतरनाक परमाणु अस्त्रों के निर्माण की तेज़ रफ्तार बढ़ती रही तब कई देशों ने अपनी कातरता जतायी, तब १९८२ में इन दोनों देशों ने अपने परमाणु अस्त्रों के निर्माण में आधी कटौती करने के प्रस्ताव को लेकर वार्त्तालाप की शुरुआत की।

इस तरह नौ वर्ष वार्त्तालाप चलते रहे, आखिर अब 'स्टार्ट' समझौता के द्वारा अपने ३० प्रतिशत परमाणु अस्त्रों की कटौती के लिए दोनों देशों ने सहमति प्रकट की। कार्यरूप में, सोवियत संघ के लिए यह कटौती ३५ प्रतिशत होगी और अमरीका के लिए २५ प्रतिशत होगी, जिस से उन देशों के खास परमाणु अस्त्र क्रमशः ७००० तथा ९००० समाप्त कर दिये जायेंगे।

सुरक्षा विशेषज्ञों का यह कहना था कि किसी दूसरे देश को भयानक खतरा पहुंचाने के लिए किसी देश के पास ८०० परमाणु हथियार रहें तो ही काफी होता है। इस समझौते की सुरक्षात्मक विशेषता एक यह है कि इन दोनों देशों में प्रत्येक आपस में प्रधान परमाणु अस्त्र परिवहनवाहन १६०० ही रख सकता है। जैसे ढेले ढेर के हों, पर उन्हें फेंकने के साधन न हों।

यह स्टार्ट समझौता १५ वर्षों तक चालू रहेगा और उस के बाद हर पांच वर्ष की अवधि के बाद इसे पुनर्नवीकरण किया जा सकता है। इस के द्वारा यह प्रयोजन भी है कि जब चाहें तब दोनों पक्षों की मिली-जुली आयोग-समिति द्वारा, ये आपसी निरीक्षण भी करवा सकते हैं।

भूमंडल-शांति की दिशा में विश्व अब थोड़ा आगे बढ़ा है, इस बात पर हम अब विश्वास कर सकते हैं।
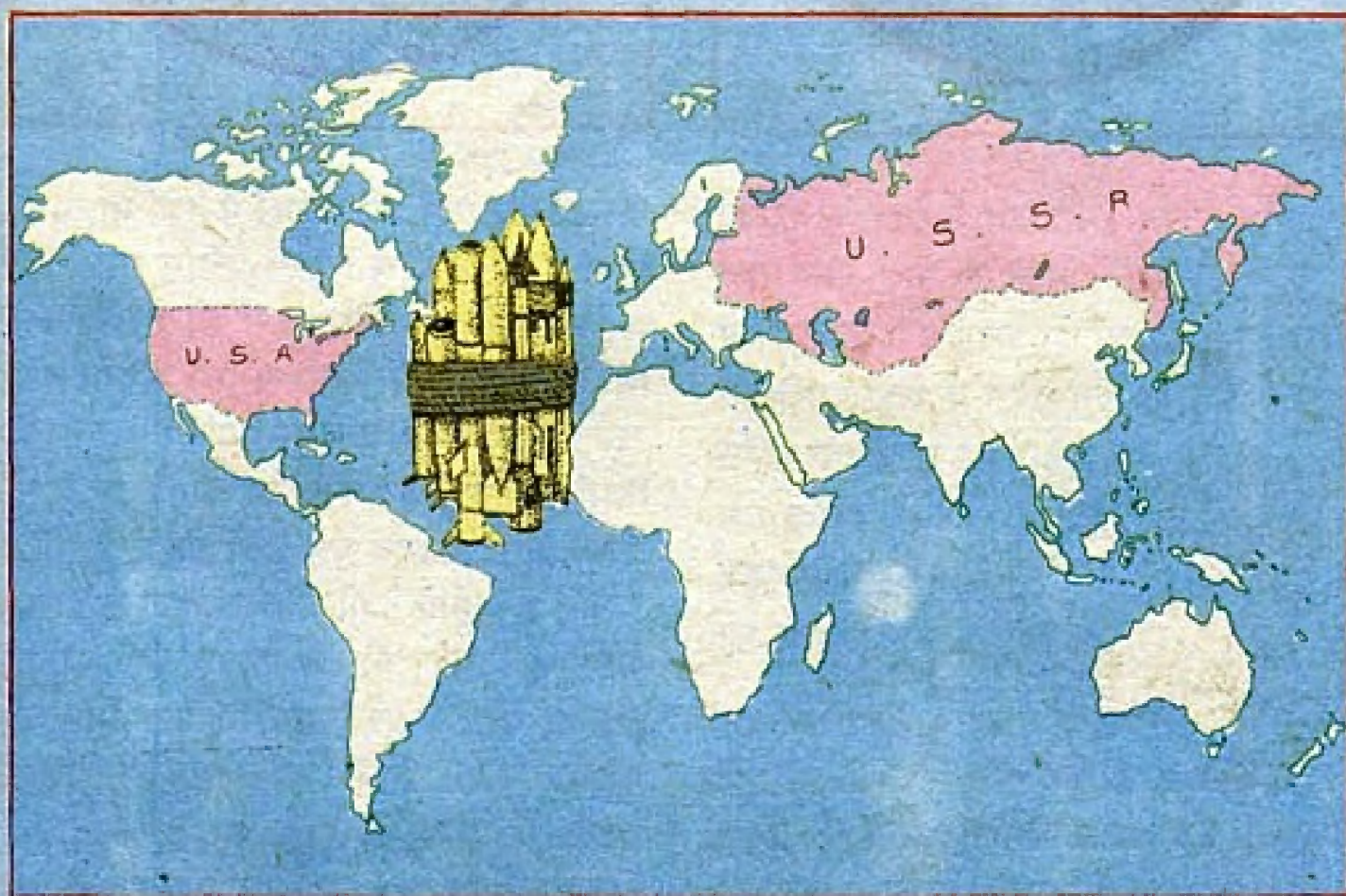
पाजी प्रेतनी

ललितपुर गांव में एक तालाब के किनारे सौ साल पुराना एक विशाल बरगद का पेड़ था । एक दिन एक प्रेतनी जो बड़ी अफलातूनी थी, वहां आयी और उस पेड़ पर डेरा डाल लिया । दूसरों को परेशान करने में उसे बड़ा मज़ा आता था ।

एक शाम सावन और रामदीन नाम के दो देहाती उस बरगद के पेड़ के नीचे आ बैठे । सावन लंबी चोटी रखता था । यह प्रेतनी उसके निकट पहुंची और उसकी चोटी पकड़कर खींचने लगी ।

सावन पीड़ा से बिलबिला उठा । उसने गुस्से से रामदीन की तरफ देखा और बोला, "क्यों बे! मेरी चोटी क्यों खींच रहा है?" और इसके साथ ही उसने रामदीन के गाल पर एक ज़ोरका थप्पड़ जड़ दिया ।

इस पर रामदीन का भी पारा चढ़ गया । बोला, "क्या बकते हो? तुमने कहा है तो मैं अब इसे खींचकर ही दिखाऊंगा ।" और यह कहकर उसने उसकी चोटी पर ज़ोर का एक झटका दिया । इस से दोनों के बीच हाथापाई हो गयी ।

एक-दूसरे को गालियां देते-देते वे गांव के मुखिया के पास पहुंचे । वह प्रेतनी भी उनके पीछे-पीछे हो ली ।

जब वे दोनों मुखिया के पास पहुंचे, मुखिया चौपाल पर बैठा दिखाई दिया । सावन ने सारी बात मुखिया को कह सुनायी और बोला, "मैं आप से अनुरोध करता कि रामदीन को कड़ी से कड़ी सजा दी जाये ।"

इस पर रामदीन बोला, "श्रीमान्, ये सावन जो कुछ कह रहा है बिलकुल झूठ है । मैं ने ऐसा कुछ नहीं किया । इसने मुझ पर झूठा आरोप लगाया और मेरे गाल पर थप्पड़ भी दे मारा । तभी मैंने इसकी चोटी खींची ।"

उनकी बातें ध्यान से सुनने के लिए मुखिया

संतोष कुमार

यहां से ।" फिर मुखिया अपने घर की तरफ बढ़ा । वह फितरती प्रेतनी भी अब मुखिया के पीछे-पीछे थी ।

मुखिया की पत्नी एक झगड़ालू किस्म की औरत थी । पति के कुर्ते की अधजली जेब देखकर वह बड़े कर्कश स्वर में बोली, "यह निगोड़ा चुरुट तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेगा । देखो, कुर्ते की क्या हालत बना रखी है ।"

पाजी प्रेतनी ने मुखिया के हाथ की छड़ी उठायी और उसकी पत्नी की पीठ पर धनाधन जमा दी । मुखिया यह देखकर हैरान रह गया ।

पीठ पर छड़ी की मार पड़ते ही मुखिया की पत्नी चीख उठी और गरजती हुई बोली, "क्या किया है मैं ने जो तुमने मुझ पर इस तरह से हाथ उठाया? तुम्हें इसका मज़ा चखाकर ही रहूंगी । परसों तुमने देबू से पांच सौ अशरफियां घूस में हड़पी थीं और उसके पक्ष में फैसला सुनाया था । यह मैं अब गांव के एक-एक आदमी को बताऊँगी ।" अड़ोस के सब लोगों को इकट्ठा करके उन्हें अपने पति की करतूत बताने लगी ।

मुखिये की पत्नी की बात का लोगों पर असर हुआ । गांव के बड़े-बुजुर्गों ने इस पर चर्चा की और उन्होंने संबंधित अधिकारियों को इसके बारे में सूचना भेज दी । तीन दिन के भीतर ही मुखिया को उसके पद से हटा दिया गया ।

इसके कुछ ही दिनों बाद वह फितरती

ने अपना चुरुट एक तरफ कर दिया । प्रेतनी मुखिया के पास गयी, चुरुट को उठाया और मुखिया की जेब में डाल दिया ।

मुखिया अपना फैसला सुनाने जा ही रहा था कि तभी उसे अपनी जेब में कुछ जलता हुआ महसूस हुआ । असने घबराहट में जेब में अपना हाथ डाला और चुरुट से उसका हाथ जल गया । उसने एकदम जेब से अपना हाथ बाहर निकाला और फौरन खड़ा हो गया । फिर वह सावन और रामदीन पर बरसता हुआ बोला, "तुम दोनों ने अभी तक इस साल का कर नहीं चुकाया है । क्या चाहते हो? कल शाम तक का वक्त दे रहा हूं । तब भी अगर कर नहीं चुकाया गया तो अपनी ज़मीनें ज़ब्त हुई समझो । अब दफा हो जाओ

प्रेतनी बरगद के पेड़ की शाखाओं पर पसरकर सोने को ही थी कि उसे पेड़ के नीचे दो व्यक्तियों की खुसर-फुसर सुन पड़ी । वह प्रेतनी तो अपनी खुराफ़ात से बाज़ आने को नहीं थी । इसलिए वह उन दोनों के निकट पहुंची और उनकी बातें सुनने लगी । वे दोनों चोर हैं और उनके नाम करमू और बेचू हैं ।

करमू और बेचू थोड़ी देर बाद वहां से चले गये । वह खुराफाती प्रेतनी भी उनके पीछे-पीछे चली । वे दोनों चोर सूदखोर रामचंद के यहां पहुंचे और उसके घर की चारदीवारी लांघकर उसके भीतर घुस गये । फिर उन्होंने वहां सेंध लगानी शुरू कर दी । बेचू भीतर जाने की कोशिश में था । करमू थोड़ा हटकर वहाँ पहरा देने लगा ।

प्रेतनी को अच्छा मौका मिल गया । उसने सेंध में घुसे बेचू का एक पांव पकड़ लिया । बेचू ने सोचा कोई आता होगा, इसीलिए चेताने के लिए करमू ने उसका पांव पकड़ लिया है । वह सेंध से बाहर आने की कोशिश करने लगा । पर प्रेतनी ने बेचू का पांव इस बुरी तरह जकड़ रखा था कि न बाहर आ सकता था, न ही भीतर जा सकता था । उसे करमू पर बहुत गुस्सा आया ।

इतने में पहरा देता करमू वहां आया । प्रेतनी ने तुरंत बेचू का पांव छोड़ दिया । उधर करमू ने देखा कि बेचू सेंध में छटपटा रहा है । इसलिए उसकी मदद करने के इरादे से उसने पांव पकड़ लिया । पर बेचू तो पहले ही आग बबूला हो रहा था । उसने अपना पांव छुड़ाने के लिए ज़ोर से करमू को लात दे मारी ।
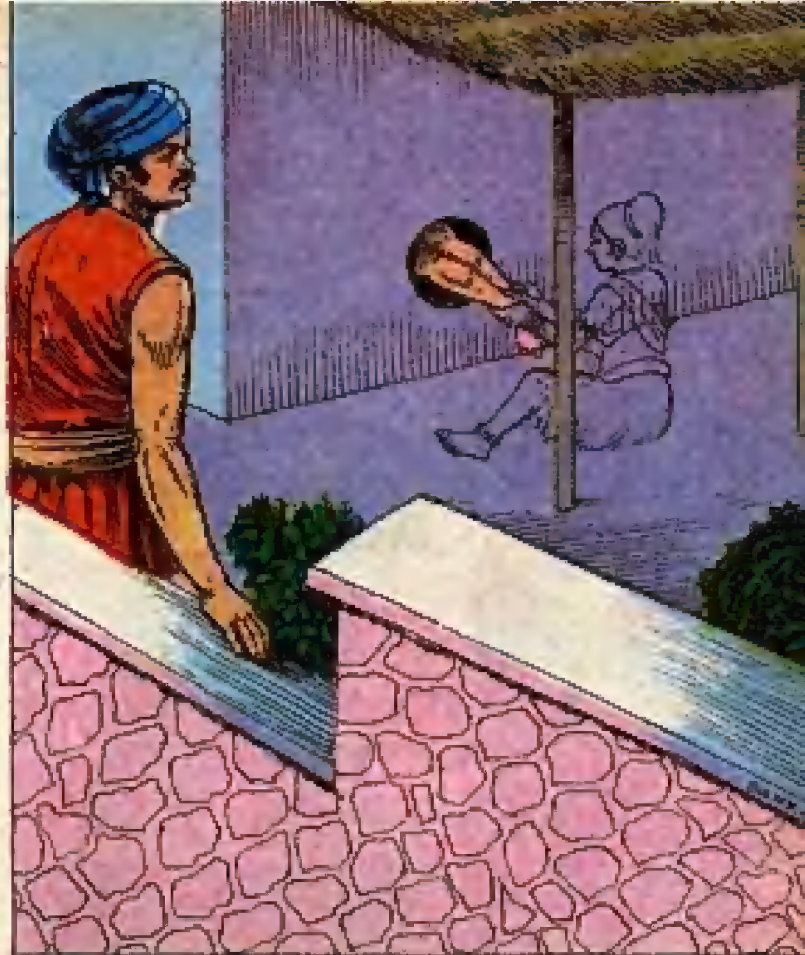
इस अचानक आक्रमण से करमू घबरा गया और चीख उठा । करमू के चीखने से रामचंद के नौकर ही नहीं, बल्कि अड़ोस-पड़ोस के लोग भी जाग उठे । परिणाम-स्वरूप दोनों चोर पकड़े गये, और पास के शहर में उन्हें ले जाकर कोतवाल के हवाले कर दिया गया ।

कोतवाल ने उन चोरों की ओर गुस्से से देखा । वह उन पर गुर्राते हुए बड़े जोर से बोला, "अरे नालायको, अगर हर छोटी-सी चोरी करते हुए ऐसे ही पकड़े जाओगे तो मेरा माहवार भुगतान कैसे निपटा पाओगे । अब कान खोलकर सुन लो, और यह मेरी आखिरी

हर कहीं चोरी करने की कोशिश की, पर आधी रात बीत जाने तक भी उनकी पेश नहीं गयी। वे बहुत निराश थे। उनके चेहरे लटक गये थे। वे उन्हीं लटके चेहरों के साथ उसी पुराने बरगद के पेड़ के नीचे आकर बैठ गये। उन्हें देखकर प्रेतनी के मन में एक विचार कौंधा। वह फौरन ज़मींदार के घर पहुँची। वहाँ से उसने गहने बटोरे, गहनों को एक गठरी में बांधकर वापस अपने डेरे पर आ गयी। फिर उसने वह गठरी पेड़ पर से नीचे चोरों पर गिरा दी।

गहनों की गठरी को देखते ही चोरों की बाछें खिल गईं। उन्हें लगा कि वनदेवता की उन पर कृपा हुई है। वे खुशी-खुशी वहाँ से गहने लेकर चल दिये और सीधे कोतवाल के पास पहुंचे। उनमें कुछ गहने उन्होंने कोतवाल को भेंट कर दिये।

गहने पाकर कोतवाल मन ही मन बड़ा खुश हुआ। उसने वे गहने अपनी बीवी को भेंट किये। बीवी तो गहनों पर मरती थी। उसने उन्हें बड़े बनाव-श्रृंगार के साथ पहना। उधर ज़मींदार के घर से उसे न्योता आया हुआ था। इसलिए वह उसी बनाव-श्रृंगार के साथ वहां जा पहुंची। ज़मींदार की बीवी अपने गहनों को अच्छी तरह पहचानती थी। उसने उन्हें जब कोतवाल की बीवी के शरीर पर देखा तो वह हैरान-परेशान हो उठी। फौरन वह अपने घर के भीतर गयी और उसने अपने गहनें की पड़ताल की। उसके गहने वाकई गायब थे।

चेतावनी है। तुम कहीं सेंध लगाओ, चोरी करो, लूटमार करो, मुझे इस सब से कुछ लेना-देना नहीं। मुझे तो कल इस वक्त तक एक हज़ार अशरफियां मिल जानी चाहिए। नहीं मिला तो मैं तुम्हारी खूब जमकर खबर लूंगा। तुम्हारी बोटी-बोटी नुचवा डालूंगा। समझे कि नहीं? अब तुम सर पर पांव रखो और यहां से नौ दो ग्यारह हो जाओ।" और इस धमकी के साथ कोतवाल ने दोनों चोरों को रिहा कर दिया।

खुराफाती प्रेतनी यह सब मंज़र देख रही थी। उससे रहा नहीं गया। उसने मन में ठान ली कि वह इस घूसखोर कोतवाल को भी सबक सिखाकर ही रहेगी।

अगले रोज़ उन दोनों, बेचू और करमू ने

पत्नी ने यह बात अपने पति को बतायी। पति, यानी जमींदार को, अपनी पत्नी के गहने कोतवाल की बीवी के शरीर पर देखकर बहुत गुस्सा आया। उसने कोतवाल की बीवी से पूछताछ की। कोतवाल की बीवी ने बिना कोई बात छिपाये बता दिया कि ये गहने उसे उसके पति ने एक दिन पहले दिये थे।

ज़मींदार ने यह जानकारी पाकर कोतवाल को बुलवा भेजा। उधर बेचू और करमू अपने हिस्से के गहने कहीं बेच डालना चाहते थे और इसी कोशिश में वे गिरफ़्त में आ गये। इस तरह चोरों के साथ-साथ कोतवाल भी पकड़ा गया और सभी को हवालात में बंद कर दिया गया।

खुराफाती प्रेतनी अब बहुत खुश थी। वह मारे खुशी के फूलकर कुप्पा हो रही थी।

एक दिन चार देहाती उसी बरगद के नीचे बैठे हुए थे और बातें कर रहे थे। बातों के दौरान गांव के पंडित और मंत्रवेत्ता ज्ञानदीप का उल्लेख आया। फिर यह भी उल्लेख आया कि उसे अपना चार साल का पोता जान से भी प्यारा है, और वह अपने उस पोते के बिना एक पल भी नहीं रह सकता।

पेड़ पर विश्राम कर रही अफलातूनी प्रेतनी के मन में विचार आया कि उस मंत्रवेत्ता पंडित को भी कुछ रसास्वादन करा देना चाहिए। इसलिए वह तुरंत उसके घर पहुंची। वहां, घर के पिछवाड़े में ज्ञानदीप का पोता खेल रहा था। उसने उसे उठाया और फलों के बाग में ले गयी। बाग में उसने उसके सामने कुछ अमरूद और आम रखे और स्वयं वहां से चंपत हो गयी, और दूर एक
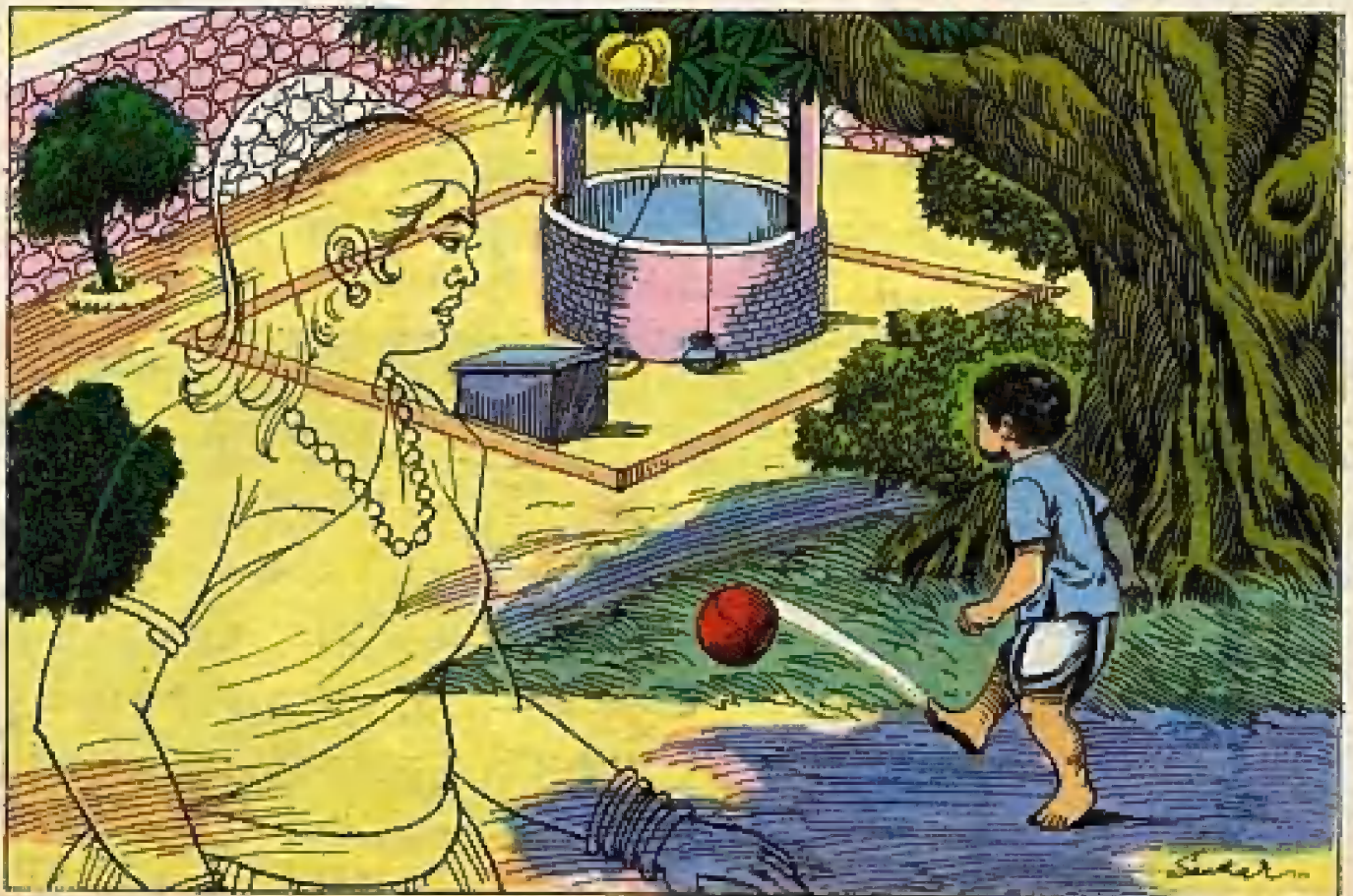
पेड़ पर बैठकर यह इंतज़ार करने लगी कि देखें, अब क्या होता है ।

थोड़ी ही देर में ज्ञानदीप अपने पोते को ढूंढ़ता हुआ कुछ देहातियों के साथ वहां बाग में आ पहुंचा,और उसे अमरूद-आम खाते देख हक्का-बक्का रह गया । फिर उसे लगा कि उसके पोते के यहां पहुंचने के पीछे ज़रूर कोई राज़ है ।

तुरंत उसने अपने साथ आये देहातियों से कहा कि वे परे हट जायें, और स्वयं वह अपनी छड़ी से ज़मीन पर एक दायरा खींचने लगा । फिर उसने कुछ मंत्र पढ़े और उस दायरे के भीतर उस अफलातूनी प्रेतनी को बुलवाया । प्रेतनी मंत्र से बंध चुकी थी । वह मारे डर के कांपने लगी और बार-बार क्षमा मांगती हुई पंडित ज्ञानदीप के कदमों में गिरने लगी ।

ज्ञानदीप उसे यों ही छोड़ने वाला नहीं था । उसने उसके मुंह से वे सब खुराफातें उगलवा लीं जो उसने अब तक की थीं । उन में सावन की चोटी खींचकर झगड़ा करवाने से लेकर आखिरी घटना तक थीं ।

इस पर ज्ञानदीप बोला, "खैर, आज तक तुमने जो-जो खुराफात की, उससे गांव की भलाई ही हुई । घूसखोर मुखिया और कोतवाल, दोनों पकड़े गये । उन्हें सज़ा भी हुई, पर मेरे पोते को यहां उद्यान में लाना—इससे किसी को क्या लाभ पहुंचेगा? यह तो सरासर नीचता है । इसलिए मैं तुम्हें अब कुछ-न-कुछ दण्ड ज़रूर दूंगा ।"

"दण्ड? फरमाइए!" प्रेतनी अब भी डरी हुई थी ।

"सुनो, और ध्यान से सुनो । तुम अभी यह गांव छोड़कर चली जाओगी । तुम इस गांव के बीस कोस के भीतर भी कहीं दिखाई नहीं दोगी । समझ गई कि नहीं ?" ज्ञानदीप ने कहा ।

"समझ गई, अच्छी तरह समझ गई । यहां से बीस कोस दूर चले जाना मैं अपना सौभाग्य मानूंगी ।" और यह कहकर वह प्रेतनी वहां से यह जा, वह जा, और देखते ही देखते पहाड़ों की दिशा में ग़ायब हो गई ।

अपूर्व के पराक्रम
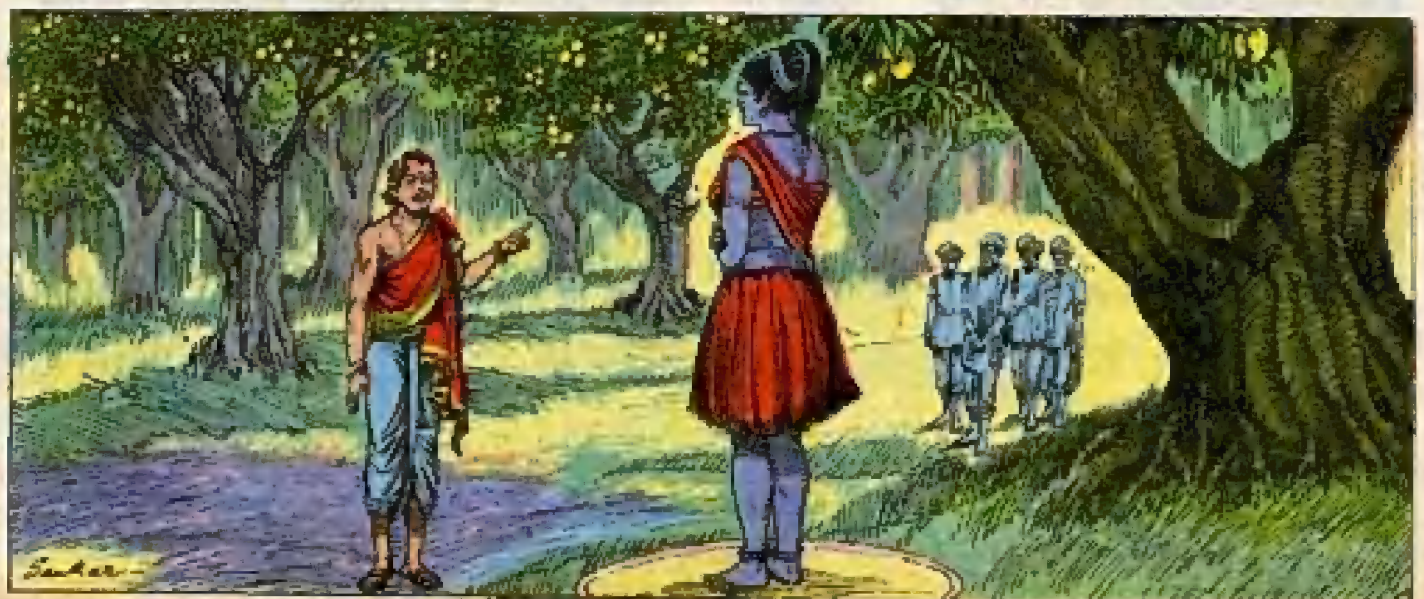
८

[अपूर्व, जिसका आविर्भाव हिमालय के एक ऋषि द्वारा किये गये यज्ञ में से हुआ था, बिलकुल गुड़िया के समान है । लेकिन वह एक अद्भुत बालक है जिसने कई लोगों को मौत के मुंह से बचाया है । समीर के माध्यम से उसने समुद्री लुटेरों से पाँच बालकों की जान भी बचायी है ।—अब आगे पढ़िए ।]

इस तरह लुटेरों के जहाज़ के साथ बालकों की रक्षा के लिए आया संरक्षों का जहाज़ वापस सफर करके तट पर पहुंचा । फौरन वहां उन की प्रतीक्षा में रहे सिपाहियों ने समुद्री लुटेरों को गिरफ्तार कर लिया, उन्हें कारागृह में डाल दिया गया था । फिर बच्चों से उन के माता-पिता और सगे संबंधी मिले । इन मिलन-क्षणों की खुशी का क्या कहना?

अगर पांच बालकों के गुम हो जाने से उनके माता-पिता और सगे-संबंधी, सब बुरी तरह परेशान हो गये थे तो उनके लौटने पर उनकी खुशी का भी कोई ठिकाना न था । यह खुशी उन बालकों के परिवार तक ही सीमित न थी, चारों ओर फैल गयी थी क्योंकि इस तरह समुद्री लुटेरों के गिरोह का सफाया हो चुका था ।

राजा ने पाँचों बालकों को इनाम दिया और समीर को काफी प्रशंसा के साथ सम्मानित किया । सभी नागरिकों ने उन्हें मुबारकबाद दी । समीर सब की आंखों में उठ

गया था ।

लेकिन समीर को बड़ा अजीब लग रहा था । अकेला वही था जो यह जानता था कि सम्मान का हकदार वह नहीं, अपूर्व है । वह तो केवल एक माध्यम था । पर वह अपूर्व को मजबूर नहीं कर सकता था कि वह सब के सामने आये । उसके सामने अब कोई चारा नहीं था, सिवाय इसके कि सारी प्रशंसा वह खुद ही लूटे ।

जब सभी लुटेरों का मुकदमा खत्म हो गया, और उन्हें उचित दण्ड दिया गया और उसके साथ ही समूचा हल्ला-गुल्ला भी खत्म हो गया, तो समीर अपने घर के निकट ही कहीं एकांत में जा बैठा ।

उसे याद आयी, अपूर्व ने उसे आश्वस्त किया था कि वह जब कभी शांत हो कर पूरे मनोयोग से उसे याद करेगा तो वह उसे अपने सामने खड़ा पायेगा । हुआ भी ऐसे ही । वह एक नदी के निकट एक शिला पर बैठ गया और इस तरह अपूर्व पर अपना ध्यान केंद्रित करने लगा ।

अभी मुश्किल से ही उसने अपनी आंखें बंद की थीं कि उसे अपूर्व का स्वर सुन पड़ा ।

"मैं यहां हूं । मैं तो कब से तुम से बात करने को तरस रहा हूं ।"

अपूर्व का स्वर वाकई बड़ा मधुर था । समीर के भीतर जैसे कि गुंजार हुई । बेशक, वह अपूर्व ही था । वह उसके ठीक सामने खड़ा था । और कौन हो सकता था वहां?

"हां समीर, अभी तुम्हारे भीतर तो मुझ से मिलने की इच्छा जागी भी न होगी कि मेरे भीतर छटपटाहट होने लगी । इसीलिए मैं यहा आया हूं ।" अपूर्व बोला ।

"मैं कितना खुश हूं! कितना!" समीर से कुछ ज़्यादा कहते नहीं बन पा रहा था ।

"आओ, हम अपनी इस खुशी को उनके साथ भी बांटें जिन्हें वास्तव में इसकी ज़रूरत है । मेरा मतलब है तुम्हारे गांव के ग़रीब लोगों के साथ । मैं जब कभी यहां आया हूं, उनमें से कुछ की हालत बहुत ही खराब दिखी है । न उनके पास खाने को है, न ही हाड़ी-बीमारी में वे किसी चिकित्सक-वैद्य से दवाई ले सकते हैं । क्या तुम उनके लिए कुछ भी नहीं कर सकते ?" समीर की ओर देखते हुए अपूर्व ने पूछा ।

"मैं? मैं क्या कर सकता हूं, ऐ नेकदिल फरिस्ते, हालांकि मैं चाहूंगा कि उन सब के दुःख दूर हों । वे गरीब हैं । उन्हें पैसे की जरूरत है और मेरे खुद के पास पैसा नहीं है । फिर मैं कैसे उन की मदद कर सकता हूं? मैं लाचार हूं । मेरे पास पैसा कहां से आएगा?" समीर ने ठंडी आह भरकर कहा ।

"तुम्हारे पास पैसा होगा, लेकिन तुम मुझे भविष्य में फरिश्ता नहीं पुकारोगे । मुझे अपूर्व कहकर पुकारो । अगर तुम ऐसा नहीं करोगे तो मैं तुम से बात करना बंद कर दूंगा ।" अपूर्व ने कहा ।

"मैं तुम्हारे हर आदेश का पालन करूंगा, अपूर्व, लेकिन मुझे पैसा मिल कैसे सकता है?" समीर ने पूछा ।

अपूर्व ने तब उसे समझाते हुए बताया कि जब वह जहाज़ में छिपा हुआ था तो उसने कुछ लुटेरों को आपस में बात करते सुना था । उन्होंने एक ऐसे छोटे-से द्वीप का ज़िक्र किया था जो चट्टानों से बना है । उनकी बातों से यही लगता था कि लगभग दस वर्ष पहले उन्होंने एक ऐसे जहाज़ को लूटा था जिस में एक नयी ब्याहता राजकुमारी सफर कर रही थी और काफी संपत्ति के साथ वह अपने पति के यहां जा रही थी ।

समीर ने उत्साह से अपने दोनों हाथों से ताली बजायी और उसकी बात को काटते हुए बोला, "हम सबने भी उसके बारे में सुन रखा है । यह एक ऐसी सनसनी-खेज़ घटना है जिसे हमारे बड़े-बुजुर्ग हमें बार-बार सुनाने से नहीं अघाते । क्या तुम ने कहीं उन लुटेरों से यह तो नहीं सुना कि उस राजकुमारी के जहाज़ से उन लुटेरों ने जो धन-दौलत और गहने लूटे थे उन्हें कहां छिपाकर रखा था । तुम्हारी बात से मेरे मन में यही संदेह होता कि उस गुप्त जगह के बारे में तुम ने सुन लिया था । है न?"

"हां, ठीक है । उस चट्टानों के द्वीप में एक गुफा में राजकुमारी के वे गहने रखे हुए हैं । साथ में कुछ कीमती हीरे-जवाहरात और सोना भी है जो उन्होंने दूसरे लोगों से छीना था । लेकिन चूंकि ये लुटेरे जल्दी ही दो गुटों में बंट गये, और दोनों ही इस लूट के माल पर अपना हक जताने लगे, इन दोनों के बीच में अक्सर झड़पें होती रहीं जिसका

"ठीक कहते हो तुम, लेकिन वह वहां ज़्यादा अर्से तक सुरक्षित नहीं पड़ा रह सकता। जब पहले गिरोह के उन बचे हुए सदस्यों को पता चलेगा कि मुख्य गिरोह जेल में ठुसा हुआ है, तो वे इस पर अपना हाथ साफ करने की जल्दी से जल्दी कोशिश करेंगे।" अपूर्व ने अपना मत व्यक्त किया।

"हम उस टापू का पता कैसे लगाएंगे?" समीर ने कुछ सोचते हुए प्रश्न किया।

"मेरा ख्याल है, वही डॉल्फिन मछली, जो हमारी मित्र बन गयी थी; इस टापू को जानती है। वह एक विशिष्ट डॉल्फिन है। मैंने जो चाहा वह करे, उसने किया। मेरे विचारों की तरंगें उस तक पहुंच जाती थीं। कल पूर्णमासी की रात है। क्या हम उस टापू का पता लगाने के लिए अभी इसी वक्त रवाना हो सकते हैं?"

इस प्रस्ताव पर समीर के भीतर स्फुरण होने लगा। "हम अपने साथ क्या उन पाँचों मित्रों को नहीं ले जा सकते? तुम सोच भी नहीं सकते कि वे तुम्हें मिलने को कितने आतुर हैं। तुम्हारे साथ किसी अभियान पर चलना उनके लिए तो एक हमेशा याद रहने वाले अनुभव के समान होगा।" समीर ने अपने मन की बात कही।

अपूर्व कुछ क्षणों तक इस नये प्रस्ताव पर सोचता रहा और फिर उसने 'हां' कहकर हामी भर दी।

उन बालकों को इकट्ठा करना या उनके माँ-बाप से उन्हें अपने साथ ले जाने के लिए

परिणाम यह हुआ कि कोई भी उस खजाने को छू न सका। इधर हमने जिस गिरोह को पकड़वाया है, इसने हाल ही की एक झड़प में दूसरे गिरोह का काम तमाम कर दिया था। उनमें से कुछ ही लोग बच पाये। उस व्यापारी जहाज़ को लूटने के बाद ये लोग जल्दी ही उस टापू के लिए लूट के माल को अपने कब्जे में लेने के लिए रवाना हो जाते। लेकिन उनके भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया और वे जेल में ठूंस दिये गये।" अपूर्व ने मुस्कराते हुए कहा।

"वाह, क्या बात है! तो इसका मतलब यह हुआ कि वह छिपा हुआ ख़जाना आज भी हमारे लिए सुरक्षित है।" समीर ने अपनी टिप्पणी जारी की।

इजाज़त मांगना कोई मुश्किल बात नहीं थी । उनके माँ-बाप में अब तक समीर के प्रति अगाध विश्वास अपना घर जमा चुका था । वे जानते थे कि समीर के कारण ही उनके बच्चे, न केवल गुलामी के चंगुल में जाते-जाते बचे हैं, बल्कि उनकी चारों ओर ख्याति भी फैल गयी है । वे यह भी जानते थे कि समीर के साथ वे हमेशा सुरक्षित हैं ।

यह बताने की ज़रूरत नहीं कि बालक स्वयं भी इस प्रस्ताव पर खुशी से फूले नहीं समा रहे थे । अपूर्व से उनकी भेंट उनके जीवन का एक अद्भुत क्षण था, पूर्ण आनंद देने वाला ।

पूरे चाँद की रात तो थी ही । चाँद का निखार अपने चरम पर था । समुद्र का तट बिलकुल सूना था । अपूर्व ने अपनी आँखें बंद कर लीं और डॉल्फिन मछलियों का ध्यान करने लगा । लहरों के परे, जहां समुद्र शांत था, वहां पानी में कुछ हलचल हुई ।

"वे आ गयी हैं ।" अपूर्व एकाएक कह उठा ।

वह ठीक ही कह रहा था । मछलियां अपने पूरे उल्लास में थीं । उन्होंने अपने सर उठाये और ऐसी आवाज़ की जिससे यह साफ पता चलता था कि वे अपूर्व का हर आदेश पूरा करने को तैयार हैं ।

जो डॉल्फिन अपूर्व से परिचित थी, वही उस समूह की अगुआ थी । अपूर्व, समीर और वे पाँचों बालक, सब एक-एक डॉल्फिन पर सवार हो गये । लगभग एक दर्जन डॉल्फिन

उनकी अंगरक्षक बनकर उनके साथ-साथ चल रही थीं ।

सब से आगे अपूर्व की डॉल्फिन थी । स्पष्टतः उसने समझ लिया था कि अपूर्व कहाँ पंहुचना चाहता है । उनकी रफ्तार खूब तेज़ थी । समुद्र बिलकुल शांत था, और हवा भी बड़ी मंद-मंद चल रही थी । कुछ पक्षी उनके सर पर मंडराते हुए उनके साथ-साथ उड़ते आ रहे थे ।

चांद अभी उगा ही था जब वे रवाना हुए थे । अब वह अपने उत्कर्ष पर था । उन्हें दूर से ही चट्टानों का एक झुंड दिखाई दिया । वह झुंड दैत्य-समान दिख रहा था । शीघ्र ही उनका रूप-आकार स्पष्ट हो गया । डॉल्फिन मछलियों ने उन में से एक को छुआ और वह रुक गयी ।

अपूर्व और उसके छः साथी चट्टानों पर चढ़ गये । लेकिन वहां तो अनगिनत चट्टानें थीं और उन में कई गुफाएं थीं । वहां छिपा हुआ खजाना कहां होगा ? आसानी से तो वह मिलने वाला नहीं था । हो सकता है उसे ढूंढ़ने में कुछ दिन लग जायें या कुछ हफ्ते भी ।

उन्हें जो पहली गुफा मिली, उसी में उन्होंने हताश होकर झांका । भीतर कुछ चमचम कर रहा था । क्या यह कोई कीमती पत्थर यानी कोई हीरा है? गुफा के भीतर जाने वाला रास्ता बहुत ही फिसलन-भरा था । वहां समूचे में काई जमी हुई थी । फिर भी समीर ने उसके भीतर जाने की कोशिश की । लेकिन वह तुरंत ही उल्टे पांव लौटा । वह पूरी तरह भयभीत हो रहा था । उसके पीछे-पीछे सर्प चले आ रहे थे । शायद वे नाग ही थे, जो गुफा से बाहर आते ही पास की दरारों और बिलों में घुस गये ।

"चलो, हमें टापू का तो पता चला, खजाने का चाहे न भी लगा हो । हम यहां फिर कभी आ जायेंगे ।" उन में से एक बालक बाकी को तसल्ली देने के इरादे से बोला ।

"चुप!" अपूर्व ने अपने होंठों पर उंगली रखते हुए कहा, "आओ, छिप जायें!" वह फुसफुसा रहा था ।

वे सब एक बहुत बड़े पत्थर के पीछे बैठ गये । वह पत्थर दीवार की तरह उन्हें आड़ दे रहा था । दूसरी तरफ उन्हे हंसी सुन पड़ी ।

"आखिर... आखिर..." कोई कहने की कोशिश कर रहा था, "दस साल तक हमें सब्र करना पड़ा । आखिर हमें खज़ाना मिल ही गया । हमारे दुश्मन नरक में बैठे आंसू बहा रहे होंगे ।" यह आवाज़ काफी दमदार और कर्कश थी ।

"तुम्हारा क्या ख्याल है? क्या हम मरने के बाद स्वर्ग में जायेंगे? और आप की यादावरी के लिए—हमारे सभी दुश्मन नरक में नहीं गये हैं । उन में से कुछ अब भी जेल में हैं ।" यह आवाज़ किसी दूसरे की थी ।

"अब देर मत करो । चलो, इस खज़ाने को नाव तक ले चलें ।" यह सुझाव किसी और से आया था ।

"लेकिन मुझे तो भूख भी लगी है, और मैं प्यासा भी हूं । आओ, पहले कुछ खा-पी लें ।" कहने वाला दूसरा व्यक्ति था ।

"नहीं, पहला काम पहले । पहले खज़ाने को नाव तक ले चलो । इसके बाद ही हम बेफिक्र होकर जी भरकर खायेंगे ।" पहले वाले व्यक्ति ने कुछ-कुछ आदेश के स्वर में उन से कहा ।

अपूर्व ने चुपके से देखा कि वे पाँच व्यक्ति हैं, और पाँचों काफी हट्टे-कट्टे हैं । वे अब बक्से उठा-उठाकर नाव की ओर बढ़ रहे थे । बक्से एक गुफा में पड़े थे । गुफा आधी भूमि के भीतर थी । अगर किसी को इसका पता न होता, तो वह इसे ढूंढ़ नहीं सकता था ।

बक्से ढोने के काम को पूरा करने में उन्हें एक घंटे से ज़्यादा समय लगा ।

"आओ, अब हम कुछ खा लें ।" उनके अगुआ लगने वाले व्यक्ति ने सब को संबोधित करते हुए कहा ।

उन में दो, नाव में से खाने-पीने की वस्तुएं ले आये । फिर वे सब साथ मिलकर बैठ गये और जमकर उन वस्तुओं पर हाथ साफ करने लगे ।

जब वे खा-पी चुके तो वे गाने लगे और साथ में शोर भी मचाने लगे । उनका यह शोर और-और ऊँचा होता जा रहा था । वे बिलकुल धुत थे ।

दो घंटे एसे ही बीत गये । वे सब शिलाओं पर पसर गये । उन्हें अब अपनी होश बिलकुल नहीं थी ।

"आओ ।" अपूर्व ने कहा, "अब हमारे चलने का समय आ गया है ।"

"डॉल्फिन कहां हैं?" एक बालक ने प्रश्न किया ।

अपूर्व हंस पड़ा "डॉल्फिन तो हैं, लेकिन अब हम नाव का आनंद लेंगे । समूचा खज़ाना तो इसमें लद ही चुका है । समझ गये न?"

बालक समझ गये थे । वे नाव में बैठ गये और उसे खेने लगे । डॉल्फिन मछलियां उनके साथ-साथ थीं और वे नाव के खेने में सहायक हो रही थीं ।

शीघ्र ही वह चट्टानी टापू काफी पीछे छूट गया । उसके साथ ही वे पाँचों पियक्कड़ लुटेरे भी छुट गये । वे खुले आकाश के नीचे पड़े थे और ओस चाट रहे थे । (जारी)

अधिकार लिप्सा

अपनी धुन के पक्के राजा विक्रम फिर उस पेड़ की ओर बढ़े । उन्होंने पेड़ की शाखा से लटकती लाश को उतारा और उसे अपने कंधे पर लाद कर, मौन साधे श्मशान की ओर बढ़ने लगा । तब लाश में मौजूद बैताल बोला, "हे राजन्, मैं समझ नहीं पा रहा कि किस के लिए आप इस तरह तकलीफ उठा रहे हैं और क्यों आधी रात के समय यों घूम रहे हैं । यह दुनिया बड़ी विचित्र है । वे लोग जो कीर्ति पाने और यश लूटने तथा अधिकार-पिपासा से पीड़ित होकर अपने लोगों को भी दांव पर लगा देते हैं, ऐसे खुदगर्ज लोगों को भी लोग महात्यागी और जनसेवक कहकर पुकारते हैं । यदि आप भी इसी तरह की कीर्ति या अधिकार पाने के लोभ में हों तो मैं आप को अभी से आगाह किये देना चाहता हूँ । इसीलिए आपको विश्वनाथ की यह कहानी सुना रहा हूँ । इससे आपका रास्ता भी कट जायेगा और आपको यह बोझ भी अधिक

बैताल कथा

महसूस नहीं होगा ।" और यह कहकर बैताल कहानी सुनाने लगा :

कोसल राज्य के श्रीपुर मंडल में चंद्रगिरि नाम का एक गांव था । वहां के मुखिया के पास विश्वनाथ नाम का एक नौकर था । एक दिन वह नौकर मुखिया से बोला, "श्रीमान, अपने परिवार की नाव चला पाना अब मेरे लिए कठिन हो रहा है । इसलिए मेरे बडे लड़के को भी कृपया कहीं काम पर लगवा दीजिए ।"

विश्वनाथ की बात सुनकर मुखिया हंस पड़ा और बोला, "इस छोटे से गांव में ऐसी कौन-सी नौकरी है जो तुम से छिपी हुई है । हां, मैं तुम्हारी जगह तुम्हारे बेटे को नौकरी पर रख सकता हूं । बोलो, मंजूर है?"

मुखिया की बात सुनकर विश्वनाथ चुप रहा । उसने इसका जिक्र अपनी पत्नी से किया । पत्नी बहुत खफा हुई । उसका कहना था कि यदि ऐसा हुआ तो इससे उनकी इज्जत मिट्टी में मिल जायेगी । लेकिन विश्वनाथ ने अपनी पत्नी की बात पर कान नहीं धरा और अपनी नौकरी अपने बेटे को दिलवा दी ।

नौकरी छोड़ने के बाद विश्वनाथ ने खेत का एक छोटा सा टुकड़ा पट्टे पर ले लिया और अपने छोटे बेटे की मदद से उस पर हल चलाने लगा ।

उन्हीं दिनों विश्वनाथ के यहाँ उनका एक रिश्तेदार आया । वह काफी अमीर था । विश्वनाथ ने उससे कहा, "कहते हैं बिना शिक्षा के मनुष्य पशु-समान होता है । हमारे गांव में कोई पुस्तकालय नहीं है ।"

विश्वनाथ की बात से उसका रिश्तेदार बड़ा प्रभावित हुआ बोला, "क्यों नहीं, क्यों नहीं । बड़ा अच्छा विचार है । मैं शीघ्र ही यहां पहले एक पुस्तकालय भवन तैयार करवाऊंगा और फिर बढ़िया-बढ़िया पुस्तकों की व्यवस्था करूंगा । यह ज़िम्मा मेरा रहा । पर इस पुस्तकालय की देख-रेख कौन करेगा? उसके लिए हमें ऐसा व्यक्ति चाहिए जो बिना कोई वेतन लिये काम करे । दरअसल, उसके लिए वेतन जुटा पाना मेरे लिए संभव नहीं होगा ।"

विश्वनाथ ने अब अपने गांव के कुछ बड़े-बुजुर्गों से इस बारे में बात की और जानना चाहा कि क्या कोई ऐसा व्यक्ति मिल पायेगा जो बिना कुछ लिये पुस्तकालय की

देख-रेख का ज़िम्मा अपने ऊपर ले सके ।

वे बड़े-बुजुर्ग थोड़ी देर तक सोचते रहे, फिर बोले, "अरे विश्वनाथ, घर में मक्खन हो और तुम घी के लिए घर-घर घूमो? यह तो वही बात हुई । हमारी बात मानो । तुम्हारा छोटा बेटा पढ़ा-लिखा है । उसे ही इस काम पर लगा दो ।"

पुस्तकालय बनकर तैयार हो गया था । विश्वनाथ का छोटा लड़का अब उसकी देखभाल करने लगा । पर इससे वह अपने पिता के काम में बिलकुल हाथ नहीं बंटा सकता था । इधर घर का खर्चा, उधर खेत का खर्चा । विश्वनाथ कर्ज़ों के नीचे बुरी तरह दब गया । उसकी हालत दयनीय हो गयी ।

एक बार श्रीपुर मंडल के अध्यक्ष ने चंद्रगिरि के मुखिया को बुलवाया और उसे आदेश के स्वर में कहा, "तुम्हारे गांव की धरती में अबरक है । तुम्हें गांव के लोगों को यहां से हटाना होगा और फिर ज़मीन की खुदाई शुरू करनी होगी ।"

मंडलाध्यक्ष का ऐसा आदेश पाकर मुखिया घबरा उठा, बोला, "क्षमा करें, मैं अपने ही गांव के लोगों के प्रति इतना निष्ठुर और अन्यायी नहीं हो सकता । इस आदेश का पालन करना मेरे लिए संभव नहीं ।"

होते-होते विश्वनाथ के कानों में भी इस बात की भनक पहुंच गयी । वह स्वयं ही मंडलाध्यक्ष के यहां पहुंचा और उससे विनीत स्वर में बोला, "महोदय, आप यह काम मुझे सौंप दीजिए । मैं इसे पूरा करवाऊंगा ।"

मंडलाध्यक्ष ने विश्वनाथ का प्रस्ताव फौरन स्वीकार कर लिया और उसे पूरे विवरण के साथ अधिकार-पत्र सौंप दिया गया ।

अधिकार-पत्र पाकर विश्वनाथ गांव वालों के पास पहुंचा और उन्हें उसने अपने-अपने घर खाली करने को कहा । गांववाले भला कब उस की बात मानने वाले थे । इसलिए विश्वनाथ को अपनी कमर कसनी पड़ी । उसने भारी तादाद में सैनिकों को बुलवाया और ज़बरदस्ती उन लोगों को किसी दूसरी जगह पर पहुंचवा दिया । फिर किसी तरह उसने उनके लिए मुआवजे की व्यवस्था भी करवायी । पर गांववालों को यह सब अच्छा नहीं लगा । उन्होंने जी भर कर विश्वनाथ की भर्त्सना की और उसे कोसा ।

लेकिन मंडलाध्यक्ष की नज़रों में विश्वनाथ चढ़ गया था। उसने एक भरी सभा में उसकी खूब प्रशंसा की और उसे नये बसाये गये गांव का मुखिया बना दिया।

ऐसे ही कुछ समय बीत गया। राजा ने श्रीपुर मंडल के बीच से बहने वाली नदी पर एक बांध बनवाने की इच्छा प्रकट की। लेकिन डर यह था कि इस बांध की वजह से उस मंडल के कई गांव पानी में डूब जायेंगे। इसलिए राजा ने श्रीपुर के मंडलाध्यक्ष को बुलवाया।

"हे कृपानिधान, क्षमा करें। इस योजना में हमें जनता का सहयोग नहीं मिलेगा। बल प्रयोग करेंगे तो खलबली मच जायेगी और विद्रोह भी भड़क सकता है। आप कृपया इस पर पुनः विचार करें।" मंडलाध्यक्ष के स्वर में विनती थी।

लेकिन राजा इस विचार को कार्य रूप देना चाहता था। विश्वनाथ को किसी तरह इसका पता चल गया। वह सीधा कोसल नरेश के पास पहुंचा और विनम्र भाव से बोला, "राजन्, आप आज्ञा दें तो बांध के इस काम को मैं अपने हाथ में ले लूं।"

राजा विश्वनाथ के प्रस्ताव पर खुश हुआ। उसने श्रीपुर के मंडलाध्यक्ष को उसके पद से हटा दिया और उसकी जगह विश्वनाथ को नियुक्त कर दिया।

नये पद पर बैठते ही विश्वनाथ ने पहले की तरह उन गांवों को खाली करवाने की कोशिश की जिन्हें बांध के पानी का खतरा हो सकता था। पर लोग तो उल्टे बौखला उठे। वे विद्रोह पर उतारू हो गये। अब विश्वनाथ ने

फिर भारी तादाद में सैनिकों को बुलवाया और गांव खाली करवाने शुरू कर दिये। गांववालों के विद्रोह को भी बुरी तरह कुचल दिया गया। लोग बहुत छटपटाये। उन्होंने विश्वनाथ की हर तरह से निंदा की और उसे स्वार्थ को पूरा करने के लिए कुछ भी कर गुज़रने वाला व्यक्ति कहा।

कुछ समय बाद बांध बनकर तैयार हो गया। उसके उद्घाटन-समारोह के अवसर पर राजा ने विश्वनाथ की खूब प्रशंसा की और उसे महान त्यागी तथा जनसेवक कहकर सम्मानित किया।

बैताल की कहानी खतम हो चुकी थी। उसने राजा विक्रम को संबोधित करते हुए कहा, "राजन्, आपकी उस विश्वनाथ के बारे में क्या राय है? उसने अपनी खुद की नौकरी छोड़ी और अपनी जगह अपने बड़े बेटे को रखवाया। क्या यह त्याग नहीं है? उसके बाद उसने जो भी काम किये, वे सब कीर्ति लूटने के लिए थे। थे कि नहीं? उनमें तो केवल अधिकार-पिपासा ही झलकती है। अपने अधिकार का क्षेत्र बढ़ाना और सीढ़ी-दर-सीढ़ी ऊपर उठते जाना, यही उसका मंतव्य था। उसने इसके लिए अपने गांव के लोगों को भी बाज़ी पर लगा दिया और उन्हें बेघर कर दिया। प्रजा में जब असंतोष फैला, तो उसे उसने बल का प्रयोग करके कुचल दिया। ऐसे व्यक्ति को महान् त्यागी और जनसेवक कहकर उसकी प्रशंसा करना कहां तक ठीक है? इससे क्या यह प्रमाणित नहीं होता कि राजा को स्वार्थी तथा जनता के हित को एक तरफ करने वाले व्यक्तियों की

भी पहचान नहीं? इन संदेहों को कृपया दूर करें । यदि इनका समुचित उत्तर जानते हुए भी इनका स्पष्टीकरण नहीं करोगे तो आपका सर फट जायेगा ।"

राजा विक्रम को अब मजबूर होकर बोलना पड़ा, "नहीं, विश्वनाथ को कीर्तिकामी और स्वार्थी कहना बिलकुल उचित नहीं दिखता । इसी प्रकार हम यह भी नहीं कह सकते कि कोसल नरेश को स्वार्थी और जनहित को एक तरफ करने वाले व्यक्तियों की पहचान नहीं थी । अबरक आसानी से मिलने वाला खनिज नहीं है, लेकिन इससे देश की आर्थिक स्थिति दृढ होती है । वैसे ही यदि नदी के बेकार बह रहे पानी को बांध लिया जाये तो वह बहुत उपयोगी हो जाता है । ऐसी परियोजनाएं शुरू करने से पहले लोगों को तकलीफ ज़रूर होती है । लेकिन इसके बाद देश में खुशहाली आती है । उससे वे सब तकलीफें भूल जाते हैं । कोसल नरेश ने यह सब पहले सोच लिया था, और तभी उसने अपनी परियोजनाओं की बात उठायी थी । लेकिन जब उन्हें अमल में लाने की बात आयी तो गांव का मुखिया और मंडलाध्यक्ष, लोगों के क्रोध का सामना करने के भय से एक तरफ हट गये । पर विश्वनाथ ने साहस दिखाया । वह जानता था कि पहले लोगों को तकलीफ होगी, पर बाद में वही लोग उसका गुणगान करेंगे । उसने दूर की सोची । इसीलिए वह आगे आया । उसे अधिकार-प्राप्ति की लालसा नहीं थी, न ही वह कोई यश या कीर्ति लूटना चाहता था । पर महान् कार्य करने पर यह सब कुछ अपने आप ही प्राप्त हो जाता है । विश्वनाथ को भी मिला । उसके बारे में और कोई निष्कर्ष निकालना नहीं चाहिए ।"

यह सब स्पष्ट करने के बाद राजा विक्रम चुप हो गये । पर उनका मौन तो भंग हो ही चुका था । इसलिए बैताल तुरंत लाश के साथ गायब हो गया, और फिर उसी पेड़ की शाखा से जा लटका । (कल्पित)

(आधार : डॉ. ताटिचेर्ला की रचना)

कसौटी

खलीफा हारूस-अल-रशीद के बाद बग़दाद पर जिन हाकिमों की हुकूमत रही, उनमें अब्दुल अज़ीज़ का खास नाम है ।

अब्दुल अज़ीज़ बहुत ही नेकदिल हाकिम था । वह दिल खोलकर लोगों को मुंह मांगा इनाम देता । उसकी एक खासियत यह भी थी कि वह जो सज़ा सुनाता, वह ऐसी होती कि मुजरिम स्वयं ही अपने अपराध के बोझ तले दबने लगता और भविष्य में अपराध करने से तोबा कर लेता ।

एक दिन अब्दुल अज़ीज के यहां बेटा हुआ । बेटा काफी अर्से के बाद हुआ था । अब्दुल अज़ीज़ बहुत खुश था और इसी खुशी में उसने ग़रीबों को खूब दान दिया । एक ग़रीब को बोरा भर गेहूं मिला । ग़रीब यह बोरा उठाते-उठाते अपने घर पहुंचा और वहां पहुंचकर उसने उस बोरे को खोला । बोरे में गेहूं के अलावा सोने का एक सिक्का भी था । सिक्का देखकर वह बहुत हैरान हुआ । उसकी बीवी की नज़र भी उस सिक्के पर पड़ी । वह भी हैरान हुई और बोली, "यह सिक्का यहां कैसे आया?"

ग़रीब ने सारी बात उसे विस्तार से बता दी । फिर बोला, "मैं वह सिक्का हाकिम को लौटाने जा रहा हूं ।"

बीवी ने इस पर अपने मर्द का विरोध किया और बोली, "अरे, क्या तुम्हारी अक्ल घास चरने गयी हुई है? तुम तो बिलकुल बेवकूफ हो । घर आयी दौलत के साथ क्या कोई ऐसा सलूक करता है?"

लेकिन अपनी बीवी की बातों का उस ग़रीब पर कोई असर नहीं हुआ । उसे फटकारते हुए बोला, "तू चुप रह । भूल से यह सिक्का गेहूं में चला आया होगा । इसे हम कैसे हज़्म कर सकते हैं? पता चल गया तो हमारी भूखों मरने की नौबत आ जायेगी ।"

अरब लोक-कथा

और इतना कहकर वह उस सिक्के के साथ हाकिम के पास पहुंचा और उसे उसने लौटा दिया । उसने अपनी बीवी की मुखालफत की कोई परवाह नहीं की ।

ग़रीब की ईमानदारी पर अब्दुल अज़ीज़ को बहुत खुशी हुई । उसने उसे इनाम में सोने के सौ सिक्के दिये ।

उधर एक साहूकार था बशीर । उसे जब यह खबर सुनने को मिली तो उसने फौरन एक ग़रीब का वेश धारण कर लिया । उसके पास उस वक्त सोने के पचास सिक्के थे । वह उन्हीं के साथ हाकिम के पास पहुंचा और बड़े अदब से बोला, "जहांपनाह, परसों जो गेहूं का बोरा आप ने मुझे इनायत फरमाया था, उस में ये सोने के पचास सिक्के भी थे । क्योंकि इन सिक्कों पर मेरा कोई हक नहीं है, इसलिए इन्हें मैं लौटाने आया हूं । आप मेहरबानी करके इन्हें कबूल फरमायें ।"

अब्दुल अज़ीज़ ने उस व्यक्ति की तरफ ग़ौर से देखा । उसकी तोंद बढ़ी हुई थी और काफी मोटा-ताज़ा दिखता था । दूसरे उसके दायें हाथ की उंगलियों में चार सोने की अंगूठियां थीं और बायें हाथ में हीरे की दो अंगूठियां थीं । साफ ही था कि वह एक धोखेबाज़ व्यक्ति था और गरीब का भेस बदले हुए था ।

हाकिम को उसका असली रूप पहचानने में देर न लगी । वह समझ गया कि उसकी इस चाल के पीछे कोई राज़ है । ज़रूर वह पचास सिक्कों के बदले पांच सौ सिक्कों की उम्मीद लगाकर आया होगा ।

हाकिम ने सोचा—इसे इस बेईमानी का सबक तो मिलना ही चाहिए । उसका वज़ीर उसके पास ही बैठा था । उसे हुक्म देते हुए बोला, "इन सोने के सिक्कों को खज़ाने में वापस भेज दो और इन जनाब की वफादारी और दयानतदारी के लिए दयानतदारीनामा लिखकर इन्हें दो ताकि वह हमेशा इनके काम आये ।"

हाकिम के मुंह से ऐसे शब्द सुनते ही बशीर का चेहरा फ़क पड़ गया । सारी पोल खुल चुकी थी । अब तो उसके काटो तो लहू नहीं ।

चन्दामामा परिशिष्ट-३६

भारत के देवगण :

हनुमान्

हनुमान् एक अद्भुत देवता है । उसे देवता का यह पद राम के प्रति अनन्य भक्ति-भाव के कारण मिला ।

हनुमान् भगवान शिव की शक्ति का प्रतीक है । शिव की यह अद्वितीय शक्ति पवन देवता ने प्राप्त की और उसे उसने अंजना नाम की एक महान जिज्ञासु युवा संन्यासिनी में उतारा । अंजना ने हनुमान् को जन्म दिया । इसीलिए हनुमान् को आंजनेय भी कहा जाता है ।

हनुमान् ने यह कर दिखाया कि ऐसा कुछ भी नहीं है जो ईश्वरीय कृपा से प्राप्त न किया जा सके । उसने सीता का पता लगाया । उसने शक्तिशाली दानव राजा रावण को धूल चटायी और वह लक्ष्मण के उपचार के लिए लाभकारी जड़ी-बूटियों से भरी हिमालय की एक चोटी उठा लाया । आज भी उसका नाम अमर है । उसी के नाम के साथ हज़ारों भक्तजन राम का नाम लेते हैं और आनंदित होते हैं ।

हनुमान् की शक्ति में निष्कपटता है । उसके पौरुष में विनम्रता है और उसकी सच्चाई में सद्भाव है । वे लोग जो उसकी ओर भक्ति-भाव से देखते हैं, उनके लिए वह एक सौंदर्ययुक्त देवता है ।

टाइपराइटर पर कमाल

यह बात बेल्जियम की राजधानी ब्रसल्स की है । वहां अंतर्राष्ट्रीय आशुलिपि और टंकण महासंघ का ३९ वां सम्मेलन चल रहा था । इसी जुलाई का महीना था, वहां 'इंटर स्टेनो-१९९१' चैंपियनशिप की प्रतियोगिता भी हुई । पंजाब के जालंधर ज़िले के गोराया नामक स्थान के अभिषेक जैन को जूनियर चैंपियन घोषित किया गया । यह प्रतियोगिता २० वर्ष से कम के बालकों के लिए आयोजित की गयी थी ।

तेरह वर्षीय अभिषेक की टंकण-गति १०९.२ शब्द प्रति मिनट थी और शुद्धि ९९.९२ प्रतिशत थी । उसकी यह गति २० वर्ष के ऊपर के वर्ग में दूसरे स्थान पर आये प्रतियोगी से भी बेहतर समझी गयी । अभिषेक ५४६ दाब (स्ट्रोक) प्रति मिनट की गति तक पहुंच गया और उसके ५११ दाब बिलकुल ठीक रहे ।

अभिषेक दसवीं कक्षा में पढ़ता है । इसलिए वह भारत में सरकारी तौर पर आयोजित लोअर ग्रेड टाइपिंग परीक्षा में नहीं बैठ सकता । सौभाग्यवश उसके पिता एक ऐसी व्यावसायिक संस्था चलाते हैं, जहां टंकण और आशुलिपि सिखायी जाती है । अपनी पाठशाला से लौटने के बाद अभिषेक अपने पिता की संस्था में चला आता था जहां उसे टाइपिंग की मशीनों पर व्यस्त प्रशिक्षार्थी बहुत अच्छे लगते । यदि वह किसी मशीन पर बैठकर उसके की-बोर्ड से छेड़खानी करने लगता तो उसके पिता कोई एतराज़ न करते । यह बात छः या सात वर्ष पहले की है । धीरे-धीरे उसने इतनी रफ्तार बना ली जिससे वह १९८७ में राष्ट्रीय स्तर की चैंपियनशिप प्रतियोगिता में भाग ले सका, और उसने वह पुरस्कार भी जीता । बाद में भी वह अपने मां-बाप से प्रेरणा पाकर इसी प्रतियोगिता में बैठता रहा ।

फिर उसने हिम्मत जुटायी और उसने अपना नाम ब्रसल्स में भिजवा दिया । वहां से उसे बुलावा भी आ गया और वह वहां अपने पिता के साथ पहुंचा । भारत की एक जानी-मानी टाइपराइटर कंपनी ने उसकी इस यात्रा का ज़िम्मा उठाया । अभिषेक ने उस कंपनी को निराश नहीं किया, न ही अपने माता-पिता को ।

इधर अभिषेक ने हिंदी और पंजाबी का टंकण भी सीख लिया है । हिंदी में उसकी गति ७५ शब्द प्रति मिनट और पंजाबी में ८० शब्द प्रति मिनट है । अगली इंटर-स्टेनो प्रतियोगिता १९९३ में इस्तंबूल (तुर्की) में होगी । अभिषेक उसमें बैठने की तैयारी कर रहा है और यह भी चाहता है कि उसका नाम गिनेस बुक ऑफ रिकार्ड्स में आ जाये । इन दिनों उसने साधारण टाइपराइटर को छोड़कर इलैक्ट्रोनिक टाइप राइटर पर अभ्यास करना शुरू कर दिया है, क्योंकि उसे अमरीका की एक संस्था द्वारा आयोजित इलैक्ट्रोनिक टाइपराइटिंग चैंपियनशिप के लिए निमंत्रण मिला है । शाबाश, अभिषेक, आगे बढ़ो!

क्या तुम जानते हो?

१. 'जब रोम जल रहा था तो नीरो चिकारा बजा रहा था ।' यह अभियोग पहली शताब्दी के एक सम्राट् के विरुद्ध लगाया जाता है । उस सम्राट् का पूरा नाम क्या था?

२. छठी शताब्दी ई.पू. में रहने वाले एक भारतीय को आज की प्लास्टिक शल्य-क्रिया का जनक माना जाता है । उस भारतीय का नाम क्या था?

३. पौधों की बढ़ती को मापने के लिए एक भारतीय ने एक यंत्र तैयार किया । उस वैज्ञानिक का नाम तथा उसके यंत्र का नाम बताओ ।

४. राजा जन्म से ही अंधा था । रानी ने अपने पति के अंधेपन के कारण अपनी आंखों पर पट्टी बांध ली थी । उस राजा-रानी के नाम बताओ ।

५. वह कौन-सा देश है जिसका झंडा ध्वज-दंड से फहराता हुआ सबसे बड़ा दिखता है?

६. ओलंपिक झंडे पर अलग-अलग रंगों के पांच वृत्त हैं । वे रंग कौन-कौन से हैं? किस आधार पर उनका चयन हुआ?

७. एक भारतीय को पहली बार १९५६ में एक सोवियत टिकट पर दिखाया गया । वह भारतीय कौन था?

८. १९०६ में जिन व्यक्तियों को नोबेल पुरस्कार मिला, उनमें से एक के आठ शिष्यों को भी बाद के वर्षों में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया । वह नोबेल पुरस्कार-विजेता कौन था?

९. अमरीका के उस राष्ट्रपति का नाम बताओ जिसका कार्यकाल सबसे छोटा रहा ।

१०. मृत सागर (डेड सी) की क्या गहराई है? यह कहां स्थित है?

११. भारत की ब्लू क्रॉस सोसाइटी की किसने स्थापना की?

१२. दीनबंधु और देशबंधु—ये किन व्यक्तियों के नाम थे?

उत्तर

१. क्लॉडियस सीज़र ड्रूसस जर्मेनीकस ।

२. सुश्रुत ।

३. जगदीश चंद्र बोस । क्रेस्कोग्राफ़ ।

४. धृतराष्ट्र और गांधारी-महाभारत में ।

५. ब्राज़ील । इसका राष्ट्रीय ध्वज राजधानी ब्रासिलिया में फहराते हुए २२९ फुट ३ इंच चौड़ा और ३२८ फुट १ इंच लंबा होता है ।

६. नीला, पीला, हरा, लाल और काला । इनमें से कम-से-कम एक रंग विश्व के किसी भी राष्ट्रीय ध्वज पर रहता है ।

७. कालिदास ।

८. जे.जे. टॉमसन ।

९. विलियम हेनरी हैरीसन । उसने १८४१ में बारिश में लगभग दो घंटे तक लगातार खड़े रहकर अपना प्रारंभिक भाषण दिया जिससे उसे निमोनिया हो गया और उसके ३२ दिन बाद वह चल बसा । पेशे से वह एक चिकित्सक था ।

१०. ३९५.९ मीटर । पृथ्वी पर यह सबसे निचला बिंदु है । इसका जल-स्तर समुद्र तल से १२९० फुट नीचा है और जल आठ गुना अधिक नमकीन है । यह जोर्डन से लगा हुआ है ।

११. मद्रास में १९६४ में कप्तान सी. सुंदरम ने बेसहारा पशुओं की देखभाल के लिए ।

१२. सी. एफ. एंड्रूस तथा सी. आर. दास ।

कोलंबस से भी पहले

१४९२ में क्रिस्टोफर कोलंबस द्वारा अमरीका की खोज किये जाने से कोई ५०० वर्ष पहले नार्वे का लीफ एरिक्सन नाम का एक व्यक्ति अपने जहाज़ में बैठकर समुद्र के रास्ते ग्रीनलैंड से उत्तरी अमरीका में पहुंचा । इस समुद्री यात्रा की याद में ३ मई को नार्वे से "गइया" नाम का एक जहाज़, जो कि ९ वीं शताब्दी के उस लुटेरों के जहाज़ का प्रतिरूप है, उसी रास्ते से चला जो कि सन् १००० के आसपास उस खोजी ने अपनाया था । इस जहाज़ के २२ अक्तूबर तक, यानी कोलंबस दिवस पर, अमरीका पहुंचने की उम्मीद है ।

चंदामामा की खबरें

अहिंसा विश्वविद्यालय

अमरीका में जैन समुदाय न्यू जर्सी के ब्लेयर्सटाउन में एक ऐसा विश्वविद्यालय स्थापित करने जा रहा है जो अहिंसा के प्रति समर्पित होगा । अहिंसा जैनमत और बौद्धमत, दोनों मतों की आधारशिला है । यह अहिंसा विश्वविद्यालय कोस्टारिका के शांति विश्वविद्यालय की पैरवी पर होगा और यहां पर संस्कृति, इतिहास, सभ्यता और मनोविज्ञान का अध्ययन कराया जायेगा ।

वाशिंगटन में अमरीकी विश्वविद्यालय में बहुत शीघ्र टैगोर अध्ययन पीठ स्थापित किया जायेगा । इस पीठ पर जो प्राध्यापक आसीन होगा, वह गुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर के जीवन, कृतित्व और उनसे जुड़े काल पर व्याख्यान देगा ।

भला आदमी

अमर बचपन में ही मां से वंचित हो गया था । उसके पिता ने उसे बड़े प्यार से पाला था । अमर व्यावहारिक ज्ञान के मामले में कच्चा था । इसी बात को लेकर अमर का पिता काफी चिंतित रहता ।

जब मृत्यु निकट आती दिखी तो अमर के पिता ने अपने बेटे को अपने पास बुलाया और उससे बोला, "बेटा, तुम बहुत नेक हो । सब के साथ तुम अच्छा बरताव करो, तुम्हें किसी तरह की कोई कमी नहीं आयेगी ।" और यह कहने के कुछ देर बाद ही उसने अपने प्राण त्याग दिये ।

पिता की बात ने अमर के मन में ज़ड़ जमा ली । एक दिन उसने सुना कि रामशास्त्री नाम के पंडित का राज-सम्मान हुआ है । वह उसके घर पहुंचा और बोला, "महोदय, आप महापंडित हैं । आपको यह सम्मान मिलना ही चाहिए था । मैं इससे बहुत खुश हूँ ।"

लेकिन रामशास्त्री आंखें तरेरते हुए बोला, "पांडित्य के बारे में तुम क्या जानते हो? इस पर कुछ कहने का तुम्हारा क्या अधिकार है? भविष्य में तुम बिना सोचे-समझे इस प्रकार की कोई टिप्पणी नहीं करोगे । समझे?"

ऐसी फटकार पाकर भी अमर चुप रहा । वह उदास हो, वहां से लौट पड़ा ।

रास्ते में उसकी अपने गांव के मुखिया पर नज़र पड़ी । मुखिया के इर्द-गिर्द गांव के बड़े-बुजुर्ग जमा थे और उसने जो फैसला सुनाया था, उसकी तारीफों के पुल बांध रहे थे । अमर जब उसके निकट हुआ तो उसने उसे नमस्कार किया, बोला कुछ नहीं ।

मुखिया को यह अच्छा नहीं लगा । वह गुस्से से तमतमा गया और अमर की ओर देखता हुआ बोला, "क्यों रे, मेरा फैसला तुम्हें पसंद नहीं आया? तू कुछ बोला ही नहीं ?"

अमर की समझ में नहीं आ रहा था कि वह

अमित श्रीवास्तव
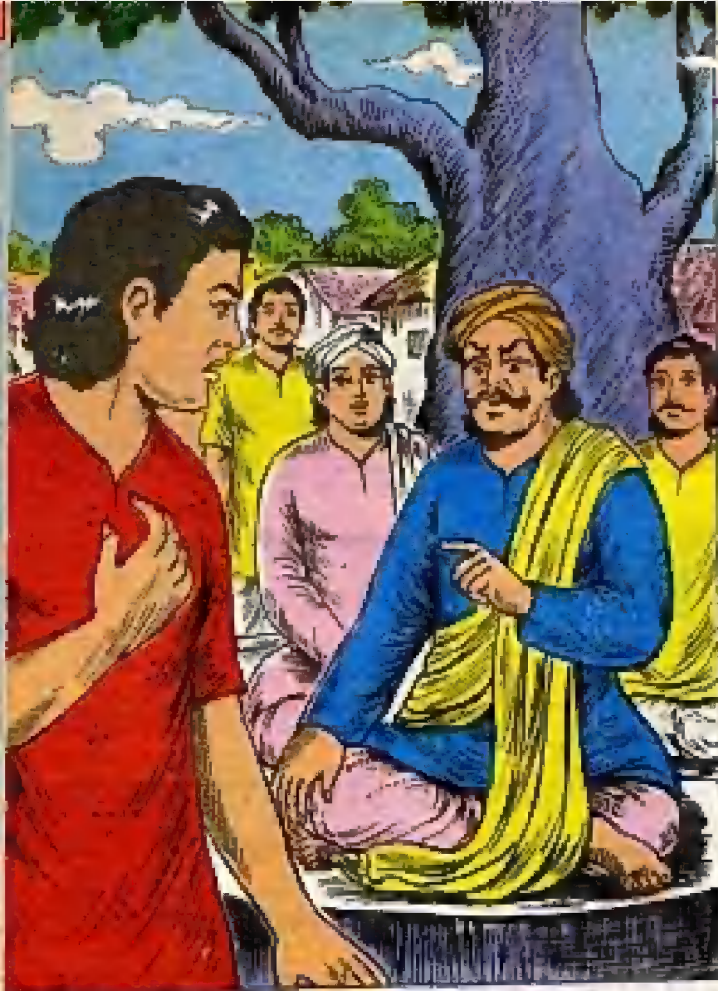
अमर का चेहरा फक पड़ गया । बोला, "क्या किसी की तभी प्रशंसा की जाती है जब उससे कोई काम हो? अरे, तुम्हारे हाथ में सचमुच जादू है, तभी तो मैं तुम्हारी प्रशंसा कर रहा हूँ ।"

"अच्छा! ठीक है! प्रशंसा करना ही चाहते हो तो मुखिया की करो । वह हमेशा प्रशंसा का भूखा रहता है । उससे तुम्हारे कई काम भी सधेंगे । लोग उसकी इसीलिए प्रशंसा करते हैं । पर ऐसी प्रशंसा करने वालों को आम तौर पर 'मक्कार' कहा जाता है । उनकी खिल्ली भी उड़ायी जाती है । क्या तुम 'मक्कार' कहलाना पंसद करोगे?" भीमल ने प्रश्न किया ।

अपने बराबर वालों की प्रशंसा करना भी उन्हें उपहास लग सकता है, यह सोचकर अमर ने अब निश्चय किया कि वह भविष्य में कभी किसी की प्रशंसा नहीं करेगा ।

एक दिन अमर के पेट में दर्द शुरू हो गया । वह वैद्य के पास गया । वैद्य के यहां पहले से ही एक घायल व्यक्ति आया हुआ था, और वैद्य उसकी पट्टी कर रहा था ।

अमर ने पूछा, "यह चोट कैसे लगी?"

व्यक्ति ने उत्तर दिया कि एक मस्त सांड उस पर टूट पड़ा था और अपने सींगों से उसे उसने बींध डाला ।

यह सब सुनकर भी अमर चुप रहा । उसने किसी प्रकार का कोई भी शब्द अपने मुंह से नहीं निकाला ।

तब वैद्य बोला, "अमर, यह बेचारा बुरी

क्या कहे । इसलिए बिना कुछ ज़्यादा बोले वह वहां से खिसक लिया । उसे क्या पता था कि कुछ लोग अपने बराबर वालों से ही अपनी प्रशंसा सुनना चाहते हैं, और कुछ हर किसी से इसे सुनने के लिए लालायित रहते हैं ।

खैर, अब अमर अपने बराबर वाले भीमल किसान के यहां पहुंचा और उससे बोला, "भीमल, तुम्हारा भी जवाब नहीं । तुम्हारे हाथ में तो जैसे जादू है । तुम जो बीज बोते हो, वह सोना बन जाता है ।"

अमर की बात सुनकर भीमल हंस दिया और कहने लगा, "क्या बात है, यार!, मुझे ऐसे ही फूंक दिये जा रहे हो? इस प्रशंसा का कारण भी तो जानूं! अच्छा, अब बताओ, तुम्हें मुझ से क्या काम है?"

तरह से घायल है और तुमने सहानुभूति में एक शब्द भी नहीं कहा । यह कैसा स्वभाव पाया है तुमने!" और उसने उसे फटकार दिया ।

कष्ट उठा रहे व्यक्ति पर दया दिखाना और उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त करना ज़रूरी है, यह बात अमर की समझ में आ गयी ।

वैद्य के यहां से वह अपने घर को लौटने को हुआ । रास्ते में उसने किसी का घर जलते हुए देखा । जिस व्यक्ति का घर जल रहा था, वह ज़ार-ज़ार रो रहा था । वह अमर का परिचित भी था । अमर से रहा नहीं गया । वह बोला, "ओ! मुझे बहुत दुःख है । तुम्हारा तो लगता है सब कुछ नष्ट हो गया!"

व्यक्ति को लगा जैसे कि अमर उसके जले पर नमक छिडक रहा है । वह एकदम से तुनककर बोला, "हर मगरमच्छ ऐसे ही आंसू बहाता है । कोरे शब्दों से क्या होता है! किसी ने अधेले-दमड़ी से भी मदद नहीं की!"

अमर की जेब तो उसे पहले ही जवाब दे रही थी । वह क्या करता? इसलिए वह वहां से चुपचाप चला आया और मन ही मन सोचता रहा—कष्ट झेल रहे व्यक्ति के प्रति कोरी सहानुभूति दिखाना काफी नहीं है । जब उसकी ठोस मदद की जा सके, तभी उसके प्रति सहानुभूति जतानी चाहिए ।

कुछ समय बाद ललित कुमार के यहां चोरी हो गयी । उसकी पच्चीस हज़ार अशरफियां जाती रहीं । ललितकुमार एक धनी व्यक्ति था । लोग उसके यहां जाते और उसे सांत्वना के दो शब्द कहकर लौट आते ।

अमर भी उसके यहां गया और उससे बोला, "महोदय, जो हुआ सो हुआ । पछताने

उन्होंने अमर को फटकारा और बोले, "तुम्हें रत्ती-भर भी अक्ल नहीं! क्या इतने बड़े आदमी से ऐसे हमदर्दी जतायी जाती है?"

अमर अब बहुत व्याकुल हो गया था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि दुनिया के प्रति वह कैसा व्यवहार करे! वह इसी चिंता में डूब गया।

एक दिन वह गांव के बाहर बरगद के पेड़ के नीचे बैठा यही सब सोच रहा था कि उस पर एक साधु की नज़र पड़ी। उसने अमर से पूछा, "तुम इतने निराश क्यों हो, बेटा?"

अमर को लगा जैसे उसका पिता ही उसे सांत्वना देने चला आया है। उसने साधु को अपनी पूरी व्यथा-कथा सुना दी।

साधु अमर की बात सुनकर हंस पड़ा। बोला, "वास्तव में तुम यह चाहते हो कि हर कोई तुम्हें अच्छा कहे, और तुम इसी चक्कर में पड़े रहते हो। इसीलिए तुम हंसी-मज़ाक का शिकार भी हो जाते हो।"

"पर स्वामी, इस में क्या मुझ से कोई भूल हुई?" अमर ने प्रश्न किया।

"नहीं बेटे, इसमें तुम्हारी कोई भूल नहीं है। तुम्हारे संपर्क में आने वाले लोग ही कुछ ऐसे हैं कि वे आदमी की सच्चाई नहीं समझते, हमेशा नुक्ता-चीनी करने पर उतारू रहते हैं। यही दुनिया का रंग-ढंग है।" साधु ने अमर को सांत्वना देते हुए कहा।

"लेकिन मेरे पिता ने मुझ से मरते समय वचन लिया था कि मैं सब के प्रति अच्छा बरताव करूंगा। इसका मतलब तो यह हुआ

से अब होगा भी क्या! आपकी हानि कोई मामूली हानि नहीं है। मुझ से जो बन सकता है, वह मैं करने को तैयार हूं। आप कहें तो आपके खेत के दो एकड़ हिस्से में मैं मुफ्त खेती कर दूं। बस, मैं आपकी इतनी ही मदद कर सकता हूं।"

अमर के सांत्वना-भरे शब्दों का ललित कुमार पर उलटा असर पड़ा। वह जल-भुन गया। बोला, "क्यों बे, मुझे क्या समझ रखा है? मैं क्या कंगाल हो गया हूं? मुझे अपने जैसा समझ लिया है? ऐसी चोरियां तो दस और भी हो जायें, तब भी मुझे कोई फर्क नहीं पड़ने वाला! मैं तब भी तुम से हज़ार गुना अच्छा रहूंगा।"

वहां कुछ और लोग भी मौजूद थे।

कि मैं अपना वह वचन निभा नहीं सकता ।" अमर जैसे कि तड़प उठा था ।

"निभा क्यों नहीं सकते?" साधु ने समझाते हुए कहा, "पर यह ज़रूरी नहीं कि तुम हर किसी की प्रशंसा करते फिरो । और यह भी ज़रूरी नहीं कि हर किसी पर तुम दया दिखाते फिरो ।"

"अच्छा, तो फिर मुझे करना क्या होगा?" अमर ने मासूमियत से पूछा ।

"बस, सब के प्रति अच्छे रहो ।" साधु ने उत्तर दिया ।

"अच्छा रहूं? पर कैसे? यह मेरी समझ में नहीं आ रहा ।" अमर ने अपनी लाचारी दिखायी ।

"तो ध्यान से सुनो । यदि तुम्हें किसी की प्रशंसा करना ज़रूरी लगे तो प्रशंसा अवश्य करो । किसी के प्रति दया दिखानी ज़रूरी दिखे तो दया भी दिखाओ, लेकिन यह सब केवल इसलिए न करो कि लोग तुम्हें भला कहें । न ही ऐसा भाव दिखाने के लिए तुम किसी के पीछे-पीछे दौड़ो । अगर कोई मदद मांगे तो जहां तक हो सके, उसकी मदद करो । पर यदि कोई तुम्हें नुकसान पहुंचाना चाहे, तुम्हारी निंदा करे तो उसे तुम क्षमा कर दो । तब भी लोग तुम्हें 'भला' कहेंगे । अकारण या क्रोध में आकर तुम किसी की निंदा न करो । पर यदि तुम्हारा अंतर्मन कुछ करने की गवाही दे, तो उसे ज़रूर करो और दूसरों की राय की परवाह मत करो । उसकी राय पर दुःखी होना भी उचित नहीं । अब समझ गये न यह दुनियादारी?" साधु ने अपनी बात समाप्त करते हुए कहा ।

अमर के भीतर अब नयी चेतना जग गयी थी । शुरू से ही वह एक भला व्यक्ति तो था, पर व्यावहारिकता से वह थोड़ा दूर था । साधु के कथनानुसार चलकर वह अब वाकई 'भला' समझा जाने लगा था, और चारों तरफ से वह वाहवाही लूट रहा था । अब वह अपने को पूरी तरह आश्वस्त भी पाता था ।
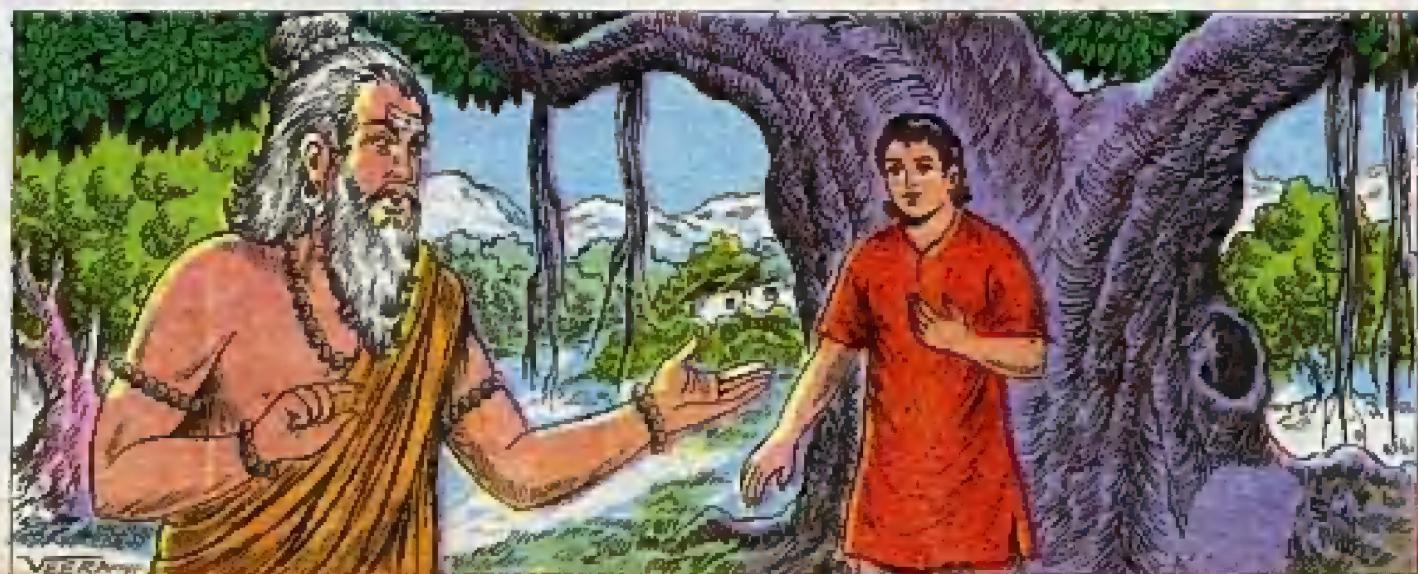
दान का फल

मलयवती राज्य पर सर्वोत्तम का शासन था । उसका महामंत्री था सुमेध । राजा सर्वोत्तम कभी-कभी भेस बदलकर और अपने महामंत्री सुमेध को साथ लेकर अपने राज्य में घूमता था ताकि अपनी प्रजा के दुःख-सुख को स्वयं जान सके ।

एक बार राजा ऐसे ही महामंत्री सुमेध के साथ घूम रहा था कि उसे राज-मार्ग के किनारे दो व्यक्तियों के बीच एक अजब तरह का विवाद सुन पड़ा । हुआ यों था कि ये दोनों मित्र सुबह-सुबह सैर को निकले थे कि उन्हें एक पेड़ के नीचे बैठा एक भिखमंगा दिख गया था । वह अपाहिज था । पहले मित्र की जेब उस समय खाली थी । इसीलिए उसने दूसरे मित्र से एक सिक्का उधार लेकर उस भिखमंगे को दे दिया । घर लौटकर जब उसने वह सिक्का मित्र को लौटाना चाहा तो मित्र ने उसे लेने से इनकार कर दिया । उसका कहना था – वह सिक्का तुमने दान में दिया है, इसलिए उसे लौटाने की ज़रूरत नहीं । उसे लौटाने की कोशिश भी करोगे तो मैं नहीं लूंगा ।

उन दोनों मित्रों के इस विवाद पर राजा गहरी सोच में पड़ गया ।

दान में दिये गये उस सिक्के का फल किसे मिलेगा? इस सवाल का राजा को जवाब नहीं मिल पा रहा था ।

राजा वापस राजमहल में पहुंचा । अब भी उसके मन में उन दोनों मित्रों के विवाद की बात ही थी । वह यही सोच रहा था कि इस दान के फल का असली हकदार उन दोनों मित्रों में कौन होगा । उसे नींद नहीं आयी । रात भर सोचने पर भी इस संदेह का संतोषजनक जवाब उसे नहीं मिला ।

दूसरे दिन राजा ने सभा में दरबारियों के सामने यह प्रश्न उठाया और पूछा, "उन

दोनों में से दान के फल का भागी कौन बनेगा?"

प्रश्न सुनकर सभी दरबारी काफी देर तक सोच में पड़ गये ।

काफी सोचने-विचारने के बाद कुछ ने कहा, "दान हुआ पहले मित्र के हाथों । इसलिए आम तौर पर इसका फल भी उसी को मिलेगा ।"

कुछ और दरबारी इस के विपरीत यूं बोले, "दान का फल तो उसे ही मिलेगा जिसका वह सिक्का था ।"

कुछ और की राय इस प्रकार थी, "एक ने दान दिया, पर दूसरे से पैसा लेकर । इसलिए इस दान के फल के भागी कोई एक नहीं, दोनों बराबर-बराबर होंगे ।"

पर राजा सर्वोत्तम इन तमाम उत्तरों से संतुष्ट नहीं हो पाया ।

राजा सर्वोत्तम ने एक बार अपने दरबारियों की तरफ बड़े ग़ौर से देखते हुए कहा, "मैं आप लोगों को एक और अवसर देता हूं । फिर सोचिए और मुझे सही-सही उत्तर दीजिए ।"

दरबारी लाचार थे । किसी को ऐसा उत्तर नहीं सूझ पा रहा था जिससे राजा को संतोष हो पाये ।

आखिर राजा ने अपने महामंत्री सुमेध की ओर देखा और उससे प्रश्न किया, "आपने तो वह विवाद अपने कानों सुना था । चलिए, अब आप बताइए ।"

"प्रभु, मेरी राय में तो दान देने का सामर्थ्य रखने से भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है दान देने का विचार मन में रखना । इसलिए जिसके मन
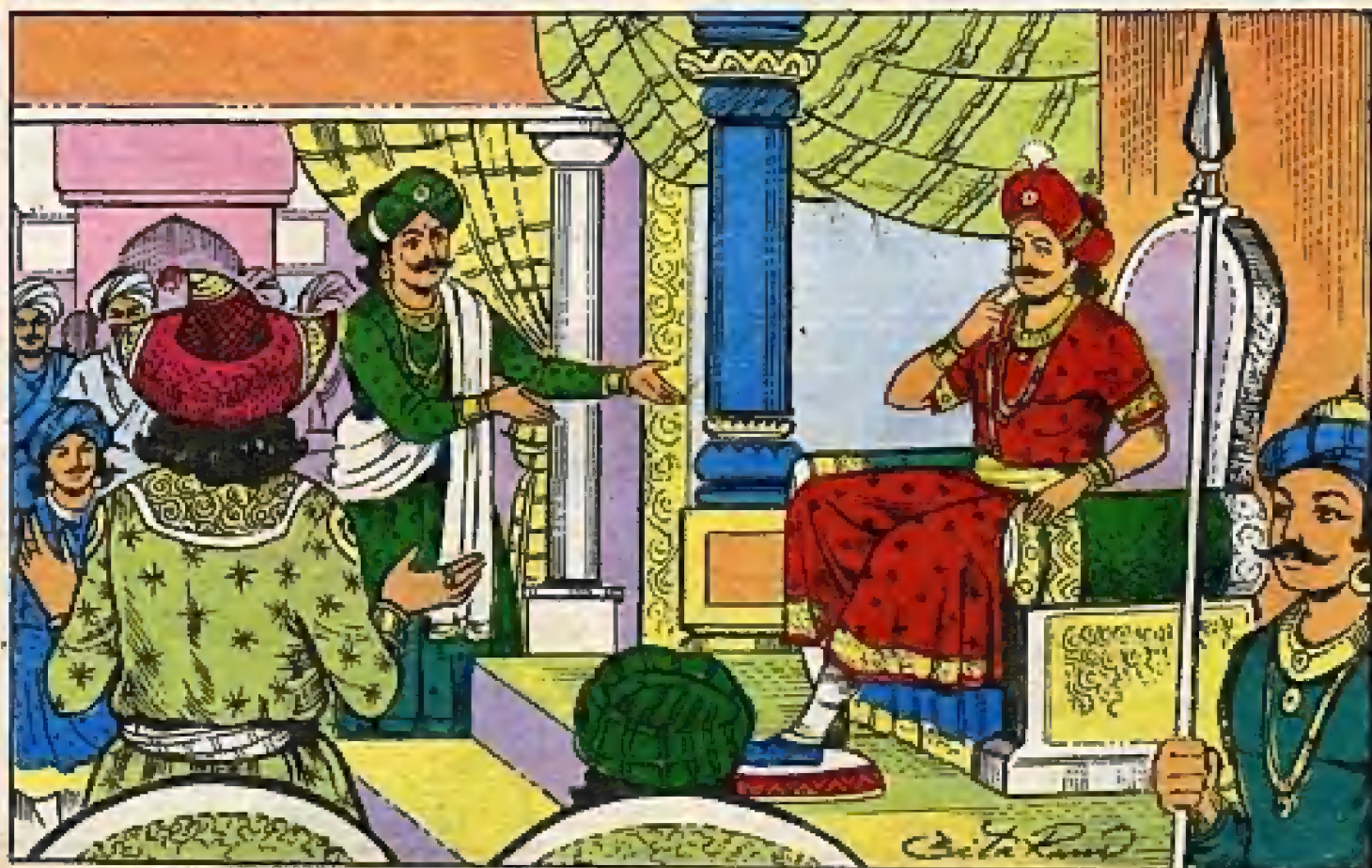
में ऐसा नेक विचार आया, वही असल में दान के फल का भागी होगा ।" महामंत्री का उत्तर इस प्रकार था ।

तभी वहां दरबारी विदूषक धरहास उठ खड़ा हुआ और बोला, "प्रभु, महामंत्री जी की राय से मैं आधा ही सहमत हूं । बेशक, सिक्का दान में देने का फल तो पहले मित्र को ही मिलेगा, लेकिन उसे किसी का सिक्का हड़पने का पाप भी तो मिलेगा ।"

धरहास का उत्तर सुनकर राजा सर्वोत्तम हंस दिया, और अपने महामंत्री की ओर देखने लगा ।

थोड़ी-सी हंसी सुमेध को भी आ गयी, पर उसने अपनी बात स्पष्ट की, "पहले मित्र ने दूसरे मित्र का सिक्का हड़पा नहीं । वह तो उसने उधार लिया था, जिसे वह लौटाना चाहता था । पर दूसरे मित्र ने जब उसे लेने से इनकार कर दिया तो पहला मित्र कर भी क्या सकता था? इसलिए किसी का पैसा हड़पने का पाप तो साफ-साफ किसी भी तरह उसे लग ही नहीं सकता ।"

पर धरहास भी कहां चुप रहने वाला था? आखिर था तो वह विदूषक ही न ।

"तब दूसरे मित्र को मिला ही क्या? एक तो उसका सिक्का जाता रहा, दूसरे उसे उसका फल भी न मिले, यह तो सरासर ग़लत हुआ न? उसे कुछ तो मिलना ही चाहिए । कहिए, क्या ख्याल है महामंत्री महोदय का?" धरहास ने अपनी दलील पेश की ।

तब सुमेध ने उत्तर दिया, "आप ठीक नहीं सोच रहे । दान देने का विचार पहले मित्र के मन में आया था, दूसरे मित्र के मन में नहीं । दूसरा मित्र तो निमित्त-मात्र है । सिक्का लेने से उसने स्वयं इनकार किया । इसलिए उस सिक्के को खोने का दायित्व भी उसी का है । दान देने का विचार जब किसी के मन में न हो, तब दान का फल उसे कैसे मिल सकता है? ज़रा ग़ौर कीजिए इस बिंदु पर ।"

सुमेध का उत्तर वाकई बड़ा तर्कपूर्ण था । इससे उसकी बुद्धि की तीक्षणता का भी पता चलता था । राजा को इससे बहुत संतोष हुआ । उसने सुमेध की खूब प्रशंसा की और उसका सत्कार भी किया ।

हनुमान ने सीता का ध्यान किया और उस की दिशा में नमन करके इस प्रकार बोलाः

''मुझे महेंद्र पर्वत पर से उड़ते हुए आप लोगों ने देखा होगा । मैं जब आकाश मार्ग से जा रहा था तो एक सुंदर-सा सोने का शिखर मुझे रोकता हुआ उभरा । पहले मेरे मन में विचार आया कि उसे मैं छेद दूं, लेकिन उसने बड़े स्नेह से मुझे बताया कि मेरे पिता वायु देव ने उसे इंद्र के चंगुल से बचाया था, उसका नाम मैनाक है और क्योंकि मैं राम के कार्य पर जा रहा हूं, इसलिए वह मेरी मदद करना चाहता है । मैंने कहा कि मैं जल्दी में हूं, रुक नहीं सकता । इसलिए उससे विदा लेकर मैं आगे बढ़ा ।

''इसके बाद सर्पमाता सुरसा मुझे निगलने को हुई । मैंने कहा कि मैं बहुत ज़रूरी काम पर जा रहा हूं, और अपना यह काम पूरा होने पर जब मैं लौटूंगा तो स्वयं ही उसका आहार बनने के लिए उसके पास पहुंच जाऊंगा । पर उसने मेरी बात नहीं मानी ।

''मैंने अपने शरीर को एकदम सिकोड़ लिया और बित्ता-भर हो गया । फिर मैं उसके मुंह में घुस गया और दूसरे ही क्षण उसमें से बाहर आ गया । तब सुरसा को मजबूर होकर मुझे आशीर्वाद देना पड़ा और मुझे विदा करना पड़ा

उससे विदाई लेकर अभी मैं कुछ दूर गया ही था कि किसी ने मेरी परछाईं को जकड़ लिया । मैं ने देखा, इस तरह मेरी परछाईं को जकड़ने वाली थी सगर की एक भयानक राक्षसी । मैं फिर लाचार हो गया और उसी

लाचारी में मुझे अपनी देह को एकदम सिकोड़कर उस सागर राक्षसी के भीतर घुसना पड़ा । लेकिन उसके भीतर पहुंचकर मैंने अपने शरीर को पूरी तरह फैला लिया जिससे उसका कलेजा फट गया और मैं बाहर आ गया । सुना है उसका नाम सिंहिका है ।

"ये सब बाधाएं पार करके मैं लंका पहुंचा और किसी तरह छिप-छिपकर उस नगरी में प्रवेश पा सका । वहां-प्रवेश करते समय एक बृहत राक्षसी मेरे सामने आ खड़ी हुई । वही लंका की रक्षा कर रही थी । उस का नाम भी लंका था । मैंने पहले लंका नामक उस राक्षसी को परास्त किया और फिर सीता मां को ढूंढ़ने निकल पड़ा ।

"वह रावण के घर में दिखाई नहीं दी । उसको ढूंढ़ते-ढूंढ़ते आखिर घूमता-फिरता रहा तो वह अशोक वाटिका नाम के एक भव्य उद्यान में दिख पड़ी । वह सूखकर कांटा हो रही थी और उसके केश जटा का रूप ले चुके थे । वह भयानक राक्षसियों से घिरी हुई थी और शोक की मूर्ति-सी दिखाई देती थी ।"

इस तरह हनुमान ने वानरों को, जो कुछ उसने देखा था, विवरण के साथ कह सुनाया । फिर अंत में बोला, "सीता महान पतिव्रता हैं । उसे देखते ही मेरे भीतर अगाध श्रद्धा पैदा हुई । वह एक वीर पत्नी है । वह चाहती है कि उसका पति ही अपने हाथों रावण का वध करे ।

"मैं एक बात आप लोगों को बताना चाहता हूं, हम सब मिलकर बड़ी ही आसानी से रावण का वध कर सकते हैं । इस में कोई संदेह नहीं । हम यदि ऐसा ही करें और सीता समेत राम-लक्ष्मण के सामने उपस्थित हो जायें तो बहुत अच्छा रहेगा । क्या विचार है आप सब का?

"वास्तव में रावण का मैं अकेले ही वध कर सकता था । इंद्रजित के अस्त्र मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते । आप लोग हां कहें तो मैं इस इंद्रजित को भी धूल चटा दूं । जांबवान और अंगद अकेले ही उन सब राक्षसों का वध कर सकते हैं । वहां दो ऐसे राक्षस भी हैं-मैंद और द्विविद-जिन्हें यह वरदान मिला हुआ है कि वे किसी के हाथों नहीं मरेंगे । अब आप लोग बताइए कि आप इस विषय में क्या कहना चाहते हैं?"

अंगद ने हनुमान की बात तुरंत मान ली । बोला, "तुम ठीक कहते हो । सीता मां का पता लगा लेने के बाद उसके बिना लौटना मुझे न्यायोचित नहीं लग रहा । ऐसा करना हमारी भारी भूल होगी । हम राम से कैसे कह पायेंगे कि हमने सीता को देखा था, पर उसे उस दुष्ट के हाथों से बचाकर अपने साथ नहीं लाये? खास-खास राक्षसों का हनुमान ने वध कर ही दिया है । अब हमें ज़्यादा करना भी क्या है? हमें सीता को अपने साथ लिवा लाना चाहिए ।"

इस पर जांबवान ने अपनी राय दी, "तुम जो कह रहे हो वह ठीक ही है । पर एक बात समझ लो—हमें राम की आज्ञा के अनुरूप ही चलना होगा । हम खुद कोई निर्णय नहीं ले सकते । यह मत भूलो की हमें वही करना होगा जिसके लिए राम हमें आदेश दें ।"

राम ने वानरों से केवल सीता का पता लगाने के लिए ही कहा था, उसे लिवा लाने के लिए नहीं कहा था । हनुमान् ने वानारों को यह भी बताया कि सीता उसके साथ चलने को तैयार नहीं थी ।

अब सब को बुजुर्ग जांबवान की बात माननी पड़ी । उन्होंने फैसला किया कि वे शीघ्र ही राम के पास पहुंचकर उन्हें सीता के बारे में खबर देंगे । पर पहले वे मधुबन जाना चाहते थे । इसीलिए आकाश-मार्ग से होते हुए मधुबन की ओर चल पड़े । मधुबन भूतल में था । उसकी देखभाल के लिए सुग्रीव ने अपने मामा धधिमुख की नियुक्ति की थी ।

मधुबन पहुंचते ही वानरों ने अंगद से मुधपान करने की अनुमति मांगी । अंगद ने अनुमति तुरंत दे दी । सीता की खबर लग जाने पर वे सब आनंद-विभोर हो रहे थे । इसलिए उन्होंने खूब जमकर मधुपान किया और अपने साथियों को भी और और पीने के लिए प्रोत्साहित करते रहे । फिर सभी वानर गाने-नाचने लगे । कुछ वानर उन्मत्त होकर हंस रहे थे । कुछ अपने होशो-हवास गंवा चुके थे और भूमि पर लोट रहे थे । कुछ ने दौड़ लगानी शुरू कर दी और कुछ आकाश में उड़ने लगे । कुछ चीख-पुकार कर रहे थे । कुछ झुंड बनाकर, एक-दूसरे की बाहें थामे, वृत्ताकार में घूम रहे थे । कुछ वानर ऊल-जलूल बकने लगे और अपने सब भेद
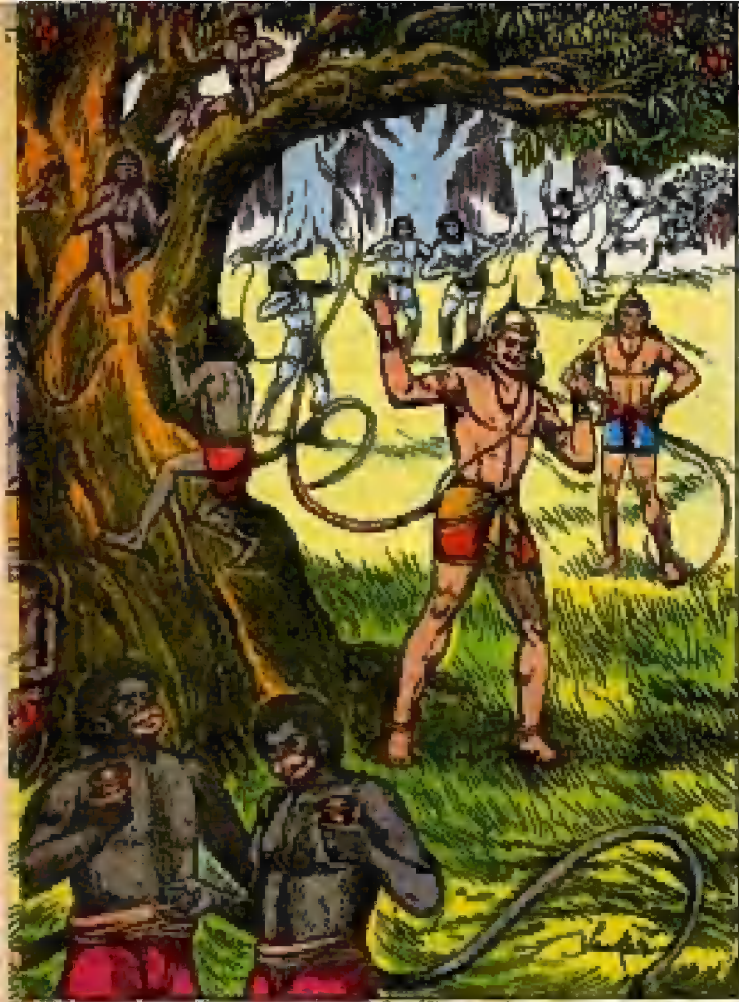
खोलने लगे । कुछ एक-दूसरे पर लुढ़कते-पड़ते, डावांडोल हुए इधर-उधर भटक रहे थे । यानी सभी एक तरह से अपने ऊपर नियंत्रण खो चुके थे ।

अब तक उन वानरों ने मधुबन का सारा मधु चटकर गया था । इतना ही नहीं, वे अब वहां के पेड़ों का भी विध्वंस करने लगे थे । यह सब देखकर धधिमुख भभक उठा और उन्हें वहां से धकियाने लगा । लेकिन किसी ने उसकी परवाह नहीं की । अब उसने उन्हें समझा-बुझाकर तथा डरा-धमकाकर वहां से भगाने की कोशिश की । इस पर भी वानर अपनी राह पर नहीं आये, बल्कि धधिमुख से भिड़ पड़े और उसे नोचने-खरोचने लगे ।

हनुमान् ने वानरों को और उकसाया, बोला, "तुम जी भरकर पियो । देखता हूं तुम्हें कौन रोकता है ।"

अंगद भी नशे में था, बोला, "हनुमान मुझे जो भी कहेगा, मैं करूंगा-चाहे वह बुरे से बुरा काम क्यों न हो । वह अच्छा काम कहेगा तो वह तो करूंगा ही ।" अंगद की बात पर वानरों ने हर्ष प्रकट किया । अब जो भी रखवाला उनके सामने आता, उसे वे पीट डालते । वे मधुपान तो कर ही रहे थे, पेड़ों के सब फल भी खाये जा रहे थे । उन्हें रोकने वाला अब कोई नहीं था । सारा मधुबन एक तरह से विध्वस्त हो चुका था ।

धधिमुख से अब यह बर्दाश्त नहीं हुआ । वह अपने सहायकों के साथ वानरों पर टूट पड़ा ।

धधिमुख तो अंगद का दादा ही था । फिर भी अंगद ने इस रिश्ते का कोई लिहाज़ नहीं किया । उसने अपने दादा को ही बुरी तरह पीट डाला । धधिमुख अब पूरी तरह लाचार था । वह अपने सहायकों के साथ सुग्रीव के पास पहुंचा ।

जब धधिमुख एकाएक सुग्रीव के पांव पर गिरा तो सुग्रीव सशंकित हो उठा और सोचने लगा—जाने क्या बला टूट पड़ी है । फिर धधिमुख से बोला, "मेरे पांव पर इस तरह क्यों गिर पड़े हो? उठो, बताओ क्या हुआ । डरने की कोई बात नहीं । मधुबन में कोई झंझट तो नहीं हुआ न?"

"प्रभु, आपके पिता ऋक्षरज के समय में या आपके समय में आज तक किसी ने ऐसा
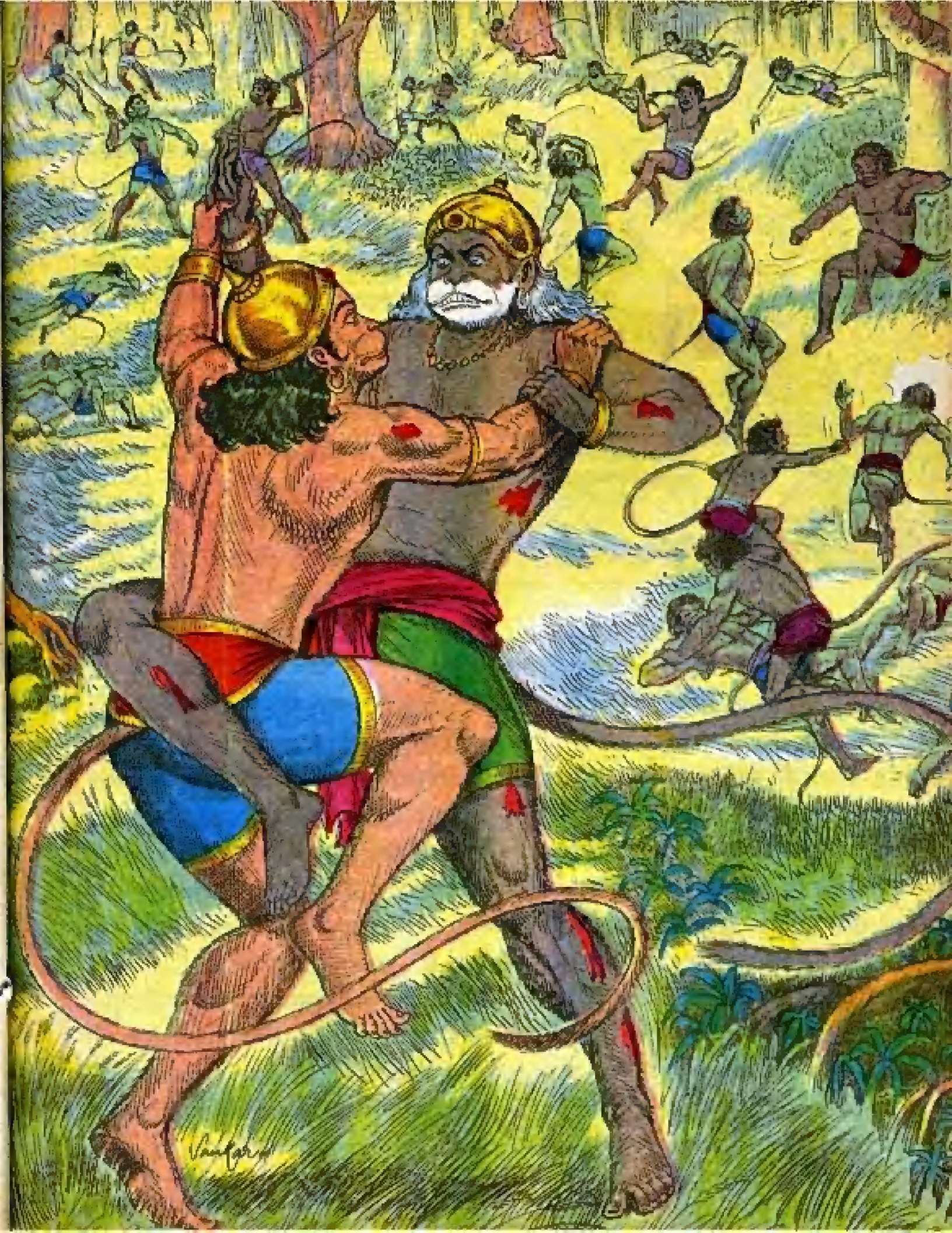
दुःसाहस नहीं किया था जो आज मधुबन के प्रति हुआ । अंगद और उसके साथी वानरों ने मधुबन में घुसकर न केवल वहां के रखवालों को मारा-पीटा, बल्कि सरा मधु पी डाला और बहुत-सा यों ही बर्बाद कर दिया । वे किसी का डर नहीं रखते, आप का भी नहीं ।" धधिमुख ने शिकायत करते हुए कहा ।

धधिमुख जब सुग्रीव के पास पहुंचा था तो वहां राम-लक्ष्मण भी मौजूद थे । लक्ष्मण धधिमुख की चिंता का कारण नहीं समझ सका । इसलिए उसने सुग्रीव से प्रश्न किया, "यह इतना दुःखी क्यों है?"

लक्ष्मण का प्रश्न सुनकर सुग्रीव बोला, "हमने सीता का पता लगाने के लिए जिन वानरों को दक्षिण दिशा में भेजा था, उन्होंने मधुबन में पहुंचकर अंधाधुंध मधुपान करना शुरू कर दिया, धधिमुख यही बताना चाह रहा है । वानरों ने सीता का पता लगा लिया होगा । तभी तो वे इतना दुःसाहस कर रहे हैं । उन सब ने नहीं लगाया होगा तो हनुमान ने ज़रूर लगाया होगा । उन में केवल वही यह कार्य करने में सक्षम है, और किसी के बूते का यह नहीं है । जांबवान, अंगद और हनुमान-ये तीनों जब एकजुट हो जायें तो समझ लो कि कभी पराजय नहीं हो सकती । मुझे उम्मीद है तुम अब समझ गये होंगे कि उन्होंने सीता का पता लगा लिया है, वरना वे कभी भी इस तरह का व्यवहार न करते । मधुबन मेरे पिता को ब्रह्मा से वरदान रूप मिला था ।"

ये सब बातें लक्ष्मण को बहुत अच्छी लगीं ।

अब सुग्रीव ने धधिमुख को संबोधित करते हुए कहा, "वानरों ने मधु पी लिया है तो चिंता की कोई बात नहीं । उन्होंने ऐसा काम पूरा किया है जिसके लिए उनके कई कसूर माफ किये जा सकते हैं । लेकिन उन्हों ने अपना काम किस तरह पूरा किया है, यह जानने के लिए हम सब, यानी राम, लक्ष्मण और मैं बड़े व्यग्र हैं । जाओ, बताओ उन्हें ।"

सुग्रीव से आश्वासन पाकर धधिमुख बिलकुल निश्चिंत हो गया । उसने राम-लक्ष्मण और सुग्रीव को नमस्कार किया और उनसे विदाई लेकर मधुबन को लौट गया । वहां पहुंचकर उसने अंगद से कहा,

"अंगद, मुझ से भूल हुई । मेरे सहायकों ने अनाधिकार ढंग से आप लोगों को रोका । आप इसे अन्यथा न लें । आप युवराज हैं । इस मधुबन पर आपका पूर्ण अधिकार है । हमारी गलती के लिए हमें क्षमा करें । आप सब लोगों की वापसी के बारे में जानकर राजा सुग्रीव बहुत खुश हैं । उन्होंने मुझ से कहा है कि मैं आप सब लोगों को उनके पास तुरंत पहुंचने के लिए कहूं ।"

अंगद तो वानरों से घिरा हुआ ही था । उसने उन्हें संबोधित करते हुए कहा, "हमारे यहां पहुंचने की खबर, लगता है, राम को मिल गयी है । अब हमें तुरंत वहां पहुंचना चाहिए । तुम सब ने जी भरकर मधुपान किया है । आशा है अब तुम्हारी थकान पूरी तरह मिट चुकी होगी । दूसरे, हमें यहां रुकने की जरूरत भी क्या है?"

वानर बिना रत्ती-सी देर किये वहां से चलने को तैयार हो गये । अंगद ने उन्हें औपचारिक आदेश नहीं दिया था, फिर भी उन्हों ने उसके संकेत को आदेश ही माना । जैसे ही अंगद आकाश में उड़ा, उसके साथ बाकी वानर भी उड़ने लगे । बादलों की तरह वे आकाश में छा गये थे और गर्जन करते हुए अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहे थे ।

उसी वक्त सुग्रीव राम से बोला, "अब मुझे कोई संदेह नहीं रहा कि वानरों ने सीता को नहीं देखा है । मैंने जो उन्हें मियाद दे रखी थी वह खत्म हो चुकी है । यदि उन्होंने सीता का पता न लगा लिया होता तो वे लौटते ही नहीं ।

अपना काम पूरा किये बिना अंगद मेरे सामने आने का साहस नहीं कर सकता था, न ही वह मुधबन में इस तरह की उठा-पटक करता । हमें मान लेना चाहिए कि हमें सीता की कुशलता का समाचार मिल गया है । अब आपकी चिंता समाप्त हुई समझो ।"

उसी समय आकाश में उड़ते वानारों की सिंहध्वनि चारों ओर फैल गयी । फिर कुछ ही क्षणों में सभी वानर सुग्रीव के समक्ष धरती पर उतर आये ।

हनुमान ने राम को साष्टाँग प्रणाम किया और बोला, "मैं सीता मां के दर्शन कर आया हूं । वह सकुशल हैं ।"

हनुमान् की बात सुनकर राम ने बड़े स्नेह से उसकी ओर देखा । फिर वह वानरों से

बोले, "हे वानरवृंद, सीता अब कहां है? वह मेरे प्रति क्या सोचती है? बिना कुछ भी छिपाये मुझे सब कुछ साफ-साफ बताओ ।" तब सब वानरों ने हनुमान से अनुरोध किया कि वही समूचा विवरण दे ।

हनुमान ने, जिस दिशा में सीता हो सकती थी, उधर मुड़कर उसे प्रणाम किया और सीता ने जो मणि हनुमान के हाथ भेजी थी, वह उसने राम के सामने प्रस्तुत कर दी । फिर वह बताने लगा कि उसने सीता के कैसे दर्शन किये—

"सौ योजन दूर सागर पार करके मैं लंका पहुंचा । वहां रावण का शासन है । नगर में सीता जी को ढूंढ़ते- ढूंढ़ते मैं अशोक बाटिका में पहुंचा । वहां मैंने उन्हें राक्षस स्त्रियों के बीच घिरा पाया । वह सूखकर कांटा हो गयी है । मैंने यह भी देखा कि जो कष्ट वह उठा रही है, वह उनके योग्य नहीं है । उनकी मानसिक दशा ऐसी थी कि वह आत्महत्या का निश्चय कर चुकी थी । मैंने किसी तरह उन्हें विश्वास दिलाया और उनसे बात की । जब आप चित्रकूट पर्वत पर रहते थे, तब की उन्होंने कौवे वाली एक घटना सुनायी ताकि आपके मन में विश्वास बैठ सके । उन्होंने मुझसे यह भी आप तक पहुंचाने के लिए कहा कि वह एक मास और जीवित रहेंगी । इसलिए आप सागर पार करने का अविलंब कोई उपाय सोचें ।"

हनुमान ने राम को जो चूड़ामणि दी थी, उसे उन्होंने अपने वक्ष से लगाया और अविरल आंसू बहाने लगे । लक्ष्मण की दशा भी वैसी ही हो रही थी । आंसू के बीच राम ने सुग्रीव से कहा, "इस चूड़ामणि को देखकर मेरा दिल बैठा जा रहा है। इसे जनक ने सीता को दिया था । विवाह के समय सीता ने इसे अपने केशों में बांधा था । इसे देखकर मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं दशरथ और जनक को देख रहा हूं । साथ ही मुझे ऐसा लग रहा है जैसे सीता अपनी पूरी सज्जा के साथ मेरे सामने खड़ी है ।"

बुद्धि परीक्षा

शिरीष नगर के राजा विजयवर्धन को यह जानने की इच्छा हुई कि उसके निकटवर्ती लोगों में सबसे बढ़कर बुद्धिमान कौन है । इसलिए उसने अपने सभी दरबारियों, अहलकारों और नौकर-चाकरों को बुलवाया और उन्हें एक जगह बैठाकर प्रश्न किया, "अगर मैं आप लोगों को अपने साथ आग में कूदने को कहूं तो क्या आप कूद पड़ेंगे? और अगर मैं आप लोगों को अपने साथ सागर में कूदने को कहूं तो क्या आप कूदेंगे?"

राजा का प्रश्न सुनकर सब लोग एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे । किसी को कोई उत्तर सूझ नहीं रहा था ।

तब शिवराज नाम के एक अहलकार ने अपनी जगह पर खड़े होकर बड़ी विनम्रता से कहा, "प्रभु, मैं आपके साथ आग में कूदने को तो तैयार हूं, पर आप के साथ मैं समुद्र में नहीं कूदूंगा । उसके लिए मुझे पंद्रह दिन की मोहलत चाहिए ।"

अब मुंह ताकने की बारी राजा की थी । उसने प्रश्न किया, "क्यों, ऐसा क्यों? आग में कूदने को तो तैयार हो, पर समुद्र में कूदने के लिए तुम्हें मोहलत चाहिए? इसके पीछे तुम्हारा क्या तर्क है?"

शिवराज का उत्तर इस प्रकार था, "क्षमा कीजिए, महाराज, बाल-बच्चों वाला हूं । कुछ समय तक जीना भी चाहता हूं । इसीलिए मैंने ऐसा उत्तर दिया । आग में कूदकर आप तो सुरक्षित रहेंगे ही, मैं भी आपके साथ सुरक्षित रहूंगा । इसीलिए मुझे इसमें कोई संकट नज़र नहीं आता । पर समुद्र में कूदना मुझे ज़्यादा खतरे से भरा लगता है, क्योंकि आप तो तैरकर बाहर आ जायेंगे, पर मुझे तैरना नहीं आता, और मैं डूब जाऊंगा । इसीलिए आप से पंद्रह दिन की मोहलत मांगी है ताकि मैं भी तैरना सीख सकूं ।"

शिवराज का उत्तर सुनकर राजा विजयवर्धन हंस पड़ा । उसने उसे अपने यहां का सब से बुद्धिमान व्यक्ति मान लिया और इसकी चारों ओर घोषणा भी करवा दी ।

—लक्ष्मी विद्या

मुखिया का न्याय

एक दिन सियाराम और घनश्याम नाम के दो व्यक्ति एक गांव में एक भटियारिन के यहां मिले । वे लंबे सफर पर थे । भोजन करके वे वहीं सो गये ।

अगली सुबह उन्हें भूख लगने पर रास्ते में खाने के लिए भटियारिन ने मोटी-मोटी रोटियां बांध दीं । सियाराम के लिए उसने तीन रोटियां बांधीं और घनश्याम के लिए केवल दो । इसके पीछे एक कारण था—सियाराम काफी उदार था और घनश्याम कंजूस था, और भटियारिन अब तक इस असलियत को जान चुकी थी ।

सियाराम और घनश्याम की राह एक ही थी । इसलिए वे साथ-साथ चल रहे थे । दोपहर हुई तो तब तक वे एक तालाब के पास पहुंचे, और वहीं एक छायादार पेड़ के नीचे रुक गये ।

तालाब के पानी से उन्होंने मुंह-हाथ धोया और खाना खाने बैठ गये । खाना खाने के लिए जब उन्होंने अपनी-अपनी पोटली खोली तो घनश्याम को यह देखकर हैरानी हुई कि उसकी पोटली में केवल दो रोटियां हैं जब कि सियाराम की पोटली में एक रोटी ज्यादा है, यानी तीन रोटियां हैं ।

"देख ली उस भटियारिन की करतूत? कैसा पक्षपात किया है!" घनश्याम ने खीझ के साथ कहा ।

सियाराम इस पर हंस पड़ा । बोला, "दो-दो रोटियां भी हम कहां खा पायेंगे? जरूरत पड़ी तो इस एक रोटी को आधा-आधा बांट लेंगे ।"

वे अभी कौर तोड़ने को ही थे कि पेड़ की छाया में से एक और यात्री वहां आ पहुंचा । उसका नाम धरमकाम था । बोला, "भाइयो, भूख से बेहाल हो रहा हूं । थोड़ा भोजन मुझे भी मिल जाये तो बड़ी कृपा होगी । मैं

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

आपका ऋणी रहूंगा ।"

"आप भी हमारे साथ बैठ जाइए" सियाराम ने बिना सोचे उसे आमंत्रण दे डाला, "जो कुछ है, उसे मिल-बांट के खा लेंगे । आशा है हमें पांच रोटियां कम नहीं पड़ेंगी ।"

सियाराम का कहना ही था कि वह अजनबी व्यक्ति भी उनके साथ बैठ गया और तीनों ने वे पाँचों रोटियां बराबर-बराबर बांटकर खा लीं ।

अब धरमकाम आगे बढ़ने को तैयार था । जैसे ही वह जाने को हुआ, उसने सियाराम के हाथ पर पांच आने की राशि रख दी और साथ में अपनी कृतज्ञता भी प्रकट की । पर सियाराम ने यह राशि लेने से इनकार कर दिया । धरमकाम नहीं माना । सियाराम को वह राशि देकर ही उसे चैन आया ।

सियाराम ने उन पांच आनों में से दो आने घनश्याम की ओर बढ़ाये । पर घनश्याम तो उस राशि को आधा-आधा ही बांटना चाहता था । बोला, "यह तो बड़ा अन्याय है । हमने धरमकाम को ये रोटियां बेचीं नहीं, स्वयं ही कृतज्ञतावश यह राशि हमें दी है । इसलिए इसे हमें आधा-आधा बांटना चाहिए ।"

सियाराम पसोपेश में पड़ गया । उसे उस राशि को आधा-आधा बांटने में कोई परेशानी नहीं थी । उसे परेशानी घनश्याम के तर्क पर हो रही थी । दूसरे, उसे उसकी कंजूसी पर भी कुछ-कुछ गुस्सा आ रहा था ।

"तो यह फैसला अब पास के किसी गांव का कोई मुखिया ही करेगा । उसका जो भी फैसला होगा, वह मैं मान लूंगा ।" सियाराम ने अपनी बात पर ज़ोर देते हुए कहा ।

दोनों फिर साथ-साथ चलने लगे । थोड़ी ही दूरी पर एक गांव था । दोनों ने मुखिया के घर का पता पूछा, उसके यहां जा पहुंचे । फिर दोनों ने अपना-अपना पक्ष उसके सामने रखा ।

मुखिया ने दोनों की बात बड़े ध्यान से सुनी और घनश्याम को संबोधित करते हुए बोला, "मेरा फैसला इस प्रकार है । धरमकाम ने जो पांच आने सियाराम को दिये हैं, उनमें से केवल एक आना तुम्हें मिलना चाहिए और चार आने सियाराम को । इसलिए तुम एक आना सियाराम को लौटा दो ।"

मुखिया के इंसाफ पर घनश्याम चौंक पड़ा– अरे, यह क्या? मिलनी चाहिए थी एक और अधन्नी, और जा रहा है एक आना वापस ।

"श्रीमान्, यह कहां का न्याय है । रोटियों की संख्या से भी देखा जाये तो मुझे दो आने तो मिलने ही चाहिए । लेकिन आप मुझे एक आना ही दिलवाना चाहते हैं । यह तो सरासर नाइंसाफी है ।" घनश्याम अपने को कहने से रोक न सका ।

"मैं जो कह रहा हूं, वही ठीक है । वही न्यायपूर्ण है । मेरी बात का ठीक-ठीक जवाब दो । मुझे बताओ कि पांच रोटियां तुम लोगों ने किस तरह बांटीं?" मुखिया ने प्रश्न किया ।

"जी, बताता हूं ।" घनश्याम नें फुर्ती से उत्तर दिया ।" हमने एक-एक रोटी के तीन-तीन टुकड़े किये । इस तरह हमने पांच रोटियों के पद्रह टुकड़े किये जिन्हें हम ने बराबर-बराबर बांट कर खाया ।"

"ठीक है । तब यह बताओ कि तुम्हारी दो रोटियों के कितने टुकड़े हुए?" मुखिया ने फिर सवाल किया ।

"छः" घनश्याम ने तुरंत उत्तर दिया ।

"उन छः टुकड़ों में से पांच तो तुमने ही खा लिये । केवल एक ही टुकड़ा तो तुमने घनश्याम को दिया न? उधर सियाराम की रोटियों के नौ टुकड़े हुए । उनमें से उसने पांच स्वयं खाये और चार उसने धरमकाम को दिये । इस तरह उन पांच आनों में से तुम्हारे हिस्से तो केवल एक आना ही आता है न? और सियाराम को चार आने मिलने चाहिए कि नहीं?" मुखिया ने अपनी बात स्पष्ट की ।

घनश्याम को मुखिया का न्याय समझ में आ गया था । उसने मजबूर होकर एक आना सियाराम को लौटा दिया और मुखिया को कोसता हुआ अपनी राह चल पड़ा ।

उधर सियाराम मुखिया की न्याय बुद्धि पर चकित था । उसने मन ही मन उसकी भरपूर प्रशंसा की और वह भी अपनी राह पर आगे बढ़ गया ।
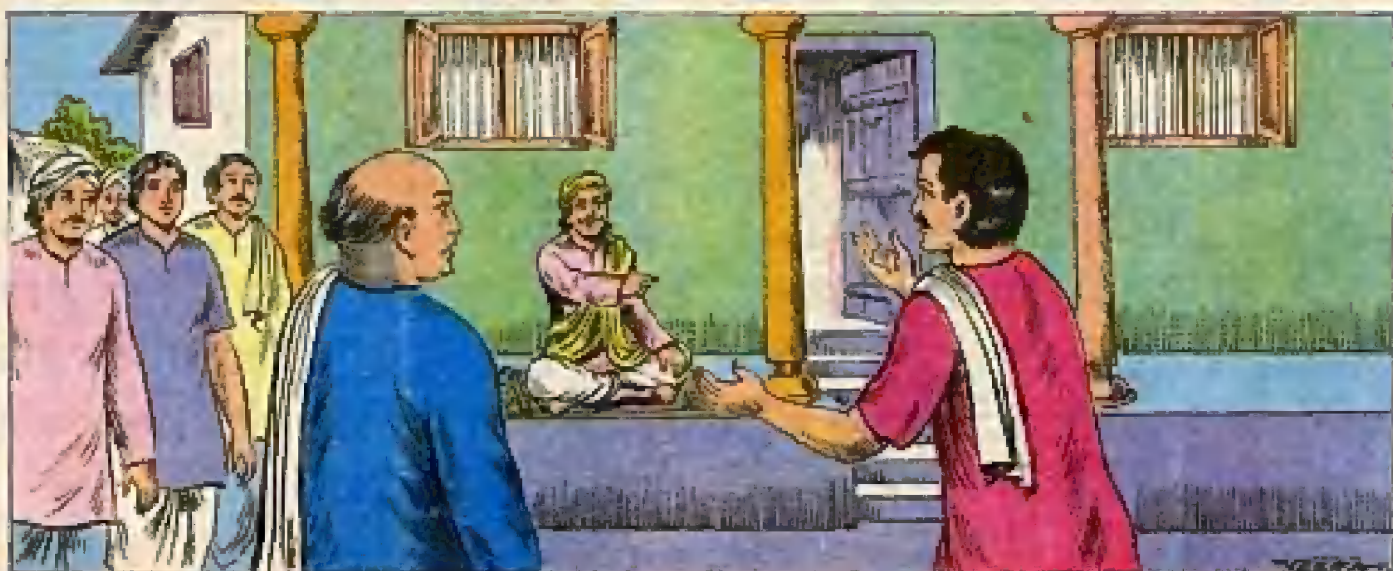
शुभ शकुन

वीरपुर में गोवर्धन और गंगाधर नाम के दो मित्र रहते थे । एक दिन शाम के वक्त वे पास के गांव में हाट के लिए निकले । इतने में कोई व्यक्ति दूध का घड़ा लिये उनके सामने से निकला ।

"दूध का घड़ा बहुत बढ़िया शकुन है । हमारा हर काम सिद्ध होगा ।" गोवर्धन ने कहा । वह शकुनों पर बहुत विश्वास करता था ।

"ये सब तुम्हारे वहम हैं । जो होना है, वह होकर ही रहेगा । फिजूल के वहम छोड़ दो ।" गंगाधर का उत्तर था ।

आखिर वे दोनों मित्र उस पास के गांव में पहुंच गये । वहां सड़क के किनारे काफी लोग जमा थे । उनके बीच हिमालय से आया एक साधु प्रवचन करने जा रहा था । वे दोनों मित्र भी वहीं रुक गये और प्रवचन सुनने लगे ।

साधु ने अपने उस प्रवचन में अंधविश्वास और फिजूल के वहमों की कड़ी भर्त्सना की । उसने लोगों से आग्रह किया कि वे शकुनों के चक्कर में न पड़ें, जैसे— किसी ने सामने से छींक दिया तो रुक जाओ, पीछे से छींका तो आगे बढ़ते चलो, बिल्ली रास्ता काट गयी तो वापस चले जाओ, इत्यादि-इत्यादि ।

साधु का प्रवचन बहुत ही प्रभावशाली था ।

"ओह, हम कितने भाग्यशाली हैं । हमें ऐसे महात्मा का प्रवचन सुनने को मिला । हम धन्य हुए । बड़ी उपयोगी बातें बतायीं इस महात्मा ने ।" गंगाधर ने कहा । साथ में उसने यह भी जोड़ दिया, "अब तुम्हें अपने सभी अंधविश्वासों को तिलांजलि दे देनी चाहिए ।"

"हां हां, तुम ठीक कहते हो । मैंने तो जब घर से निकलते ही दूध का घड़ा लिये उस व्यक्ति को देखा था, तो फौरन कहा था कि अब हमारे सब काम ठीक होंगे । देखा, वही हुआ न! वह शकुन इतना शुभ था कि उसी की बदौलत हमें यह प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला ।" गोवर्धन अपने पहले वाले अंदाज़ में कहे जा रहा था ।

—किशोर अग्रवाल
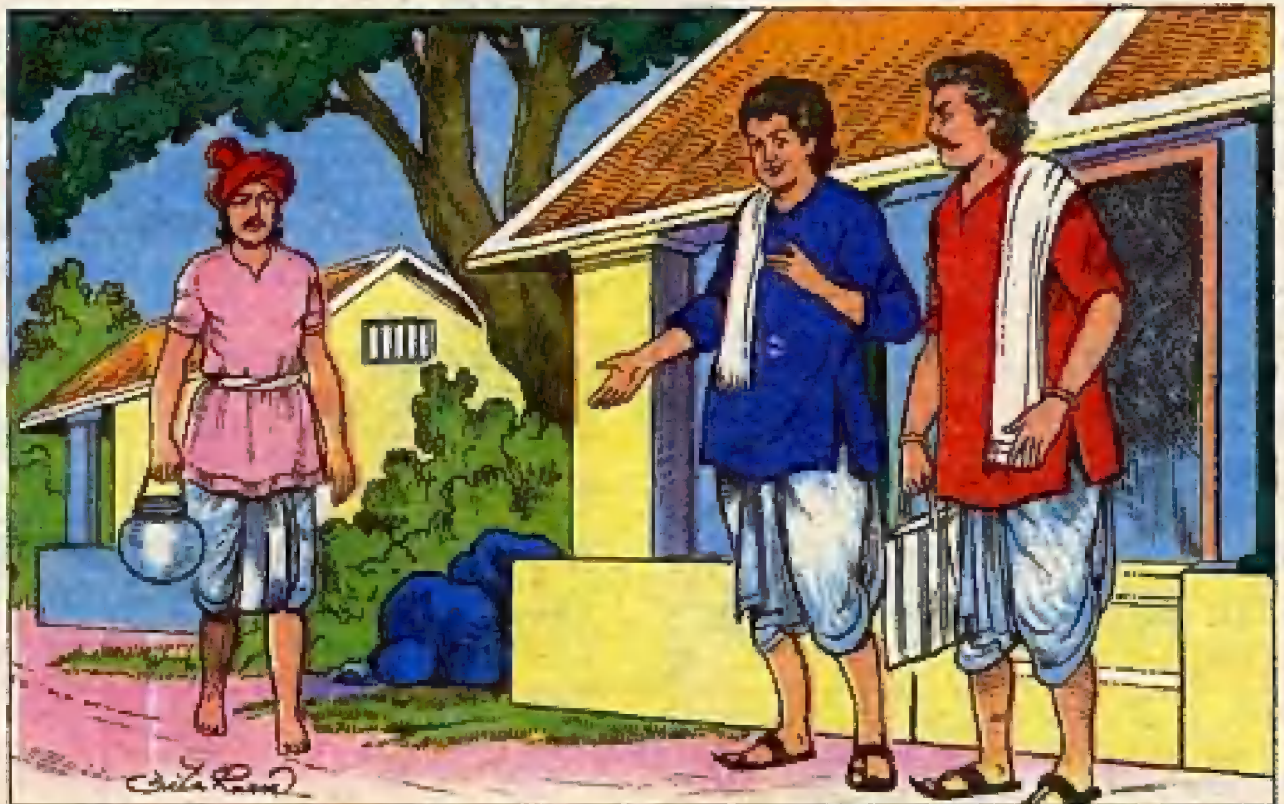
व्यावहारिक चिकित्सक

एक युवक था श्रीमुख । वह एक महान् वैद्य बनना चाहता था । उसे पता चला कि दण्डकारण्य में एक मुनि है दिव्यात्म, जो वैद्य शास्त्र में पारंगत है और वह वैद्य शास्त्र के सूक्ष्म से सूक्ष्म रहस्य जानते हैं । श्रीमुख उन्हें ढूंढ़ता हुआ किसी तरह उनके आश्रम में पहुंचा ।

मुनि दिव्यात्म ने श्रीमुख की जिज्ञासा-अभिलाषा देखते हुए उसका अपने आश्रम में स्वागत किया और उसे चार वर्ष तक शरीर-शास्त्र, विभिन्न जड़ी-बूटियों तथा चिकित्सा-पद्धति के बारे में भरपूर ज्ञान दिया ।

एक दिन उन्हों ने श्रीमुख से कहा, "पुत्र, विद्यार्जन के प्रति तुम्हारी श्रद्धा देखकर मैं बहुत खुश हूँ । दूसरे छात्र जो दस वर्षों में सीखते हैं, वह तुम ने चार वर्षों में सीख लिया है । अब तुम्हारा विद्याभ्यास समाप्त हुआ । लेकिन वैद्यक शुरू करने से पहले तुम किसी समर्थ वैद्य के यहां कुछ समय के लिए उसका सहायक बनकर काम करो । यह व्यावहारिकता के लिए बहुत जरूरी है ।"

श्रीमुख ने अपने गुरु के चरण छुए और उनसे विदा लेकर वह चित्रपुर नाम के शहर में पहुंचा ।

चित्रपुर में चार समर्थ वैद्य थे । लेकिन उन चारों में सदानंद और भी समर्थ माना जाता था । श्रीमुख ने चाहा कि सदानंद से बात करे, लेकिन सदानंद बहुत व्यस्त रहता था, क्योंकि उसके पास रोगियों का तांता लगा रहता ।

मजबूर होकर श्रीमुख को बाकी के तीनों वैद्यों से भेंट करनी पड़ी । पर उनसे भेंट करने के बाद तो वह और भी निराश हो गया, क्योंकि उन में से कोई भी उसके टक्कर का नहीं था ।

शारदा श्रीवास्तव

उन तीनों वैद्यों से अलग-अलग मिलकर श्रीमुख ने कहा, "महोदय, वैद्यक करने वाले को शरीर-शास्त्र, रोग लक्षण और खासकर जड़ी-बूटियों के सत्यों का तो पता होना ही चाहिए। मेरे गुरु का आदेश है कि मैं कुछ समय तक किसी समर्थ वैद्य के यहां रहूं और तभी अपना काम स्वतंत्र रूप से शुरू करूं। मैं आपके प्रति कृतज्ञ रहूंगा यदि आप किसी तरह सदानंद से मेरी भेंट करवा दें तो।"

हर वैद्य का श्रीमुख को एक ही उत्तर था, "सदानंद भाग्यशाली है। और अपने भाग्य के बल पर ही वह इतना नाम कमा पाया है। पर योग्यता उसकी ऐसी-वैसी ही है। वह रोगियों को औषधियां भी इधर-उधर से पूछकर देता है। पहले मैं उसकी चाल समझ नहीं पाया था। इसलिए उसे हर तरह से सहयोग देता रहा। कुछ दिनों बाद मुझे सारी बातों का पता चल गया और अब असलियत जान गया हूं। वह हमारे चिकित्सा ज्ञान के बल-बूते पर ही इतना बड़ा वैद्य बना है।"

श्रीमुख को इन तर्कों पर विश्वास नहीं हुआ। फिर भी वह कुछ दिनों तक दूसरे वैद्यों की बातों को सही मानते हुए सदानंद के घर पर आंख रखे रहा।

फिर एक दिन तो वह स्वयं एक रोगी के रूप में उसके यहां जा पहुंचा। सदानंद ने उसे कुछ ऐसे रोग-लक्षण बताये जो एक पहुंचा हुआ चिकित्सक ही बता सकता था। श्रीमुख इस पर खुश हुआ। पर सदानंद ने दवाई नहीं दी, उसके लिए उसने उसे चार

दिन के बाद आने को कहा।

चार दिन बाद श्रीमुख फिर वैद्य सदानंद के यहां गया।

सदानंद उससे बोला, "तुम्हारा रोग तीन तरह से दूर हो सकता है। एक तो यह कि मैं तुम्हें जो तरकारियां खाने को कहूं, वे तुम एक साल तक खाते रहोगे, किसी दवा-दारू की तुम्हें ज़रूरत नहीं पड़ेगी। दूसरा यह कि जो दवाइयां मैं दूं, तुम्हें उन्हें चार महीने तक परहेज़ के साथ लेना होगा। तीसरा तरीका बिलकुल अलग है। इससे तुम एक ही सप्ताह में ठीक हो जाओगे। अब खर्चा भी सुन लो। पहला तरीकर अपनाते हो तो मैं एक हज़ार अशरफियां लूंगा। दूसरा तरीका तुम्हें स्वीकार है तो तुम्हें तीन हज़ार

अशरफियां खर्च करनी होंगी । और तीसरे तीरीके पर पांच हज़ार अशरफियां खर्च आयेंगी । इन में जो भी तरीका तुम्हें पंसद है, मुझे बता दो । मुझे अभी तुम्हारी कुछ परीक्षाएं भी करनी होंगी । तभी इलाज शुरू हो पायेगा ।"

सदानंद की बात सुनकर श्रीमुख चक्कर में पड़ गया ।

फिर संभलकर श्रीमुख ने सदानंद की ओर प्रशंसात्मक दृष्टि से देखा और बोला, "आप साधारण वैद्य नहीं, असाधारण हैं । अभी तक तो इस इलाज के दो ही तरीकों का चिकित्सकों को ज्ञान था । केवल दो ही मास पहले मेरे गुरु मुनि दिव्यात्म ने तीसरा तरीका खोजा था, लेकिन ताज्जुब है, आपको उस नये-नये तरीके का भी ज्ञान है ।"

ये बातें सुनकर पहले सदानंद सकपका गया; फिर उसके चेहरे पर मंदहास दिखाई पड़ा ।

"तो तुम दिव्यात्म के शिष्य श्रीमुख हो ।" सदानंद ने कहा, "इस रोग का निदान जानने के लिए मैंने दिव्यात्म के पास अपना एक खास आदमी भेजा था । दिव्यात्म ने तुम्हारे बारे में भी कहला भेजा था । लेकिन इतने कम अंतराल में तुम्हें यह रोग कैसे लग गया, यही मेरी समझ में नहीं आता । फिर, तुम्हें तो स्वयं को चिकित्सा-ज्ञान है । तुम मेरे पास क्यों आये हो?"

अब श्रीमुख अपना उद्देश्य सदानंद से छिपाकर न रख सका । वह विस्तार से सब बताकर यूं बोला, "आप ने वैद्यक-शास्त्र कहां सीखा? इस नगर में आपकी इतनी ख्याति है, इसका क्या कारण है? आप चिकित्सा के लिए लोगों से मुंह-मांगा मूल्य वसूल करते हैं, इसका भी ज़रूर कोई कारण होगा ।"

श्रीमुख का प्रश्न सुनकर सदानंद कुछ समय के लिए मौन रहा । उसे अपनी बीती कहानी की बातें याद आयीं । अब उसने श्रीमुख को अपनी कहानी बतानी शुरू कर दी । वह इस प्रकार थी –

"मैं, दरअसल, वैद्य नहीं था । मैं तो एक वैद्य के यहां दवाई पीसने वाला सहायक था । पेट तो किसी तरह भरना ही था । पर मैं वैद्य के हर काम को बड़े ध्यान से देखता था ।

रोगों और उनके उपचार के बारे में वैद्य जी से कुरेद-कुरेद कर पूछता । एक दिन उस वैद्य की मृत्यु हो गयी । वैद्य के रिश्तेदार आये और उसकी संपत्ति से ही उनका मतलब था, इस लिए वे उसे बटोरकर चलते बने ।

"कुछ रोगी ऐसे थे जिनका इलाज अभी अधूरा था । उनका इलाज मैंने अपने हाथों में ले लिया । काफी हद तक तो चिकित्सा-ज्ञान मैं पा ही चुका था । धीरे-धीरे सब रोगी चंगे होने लगे । इससे मेरी साख जमने लगी । मेरा नाम चारों तरफ फैल गया । और तो और, लोगों में अब यह प्रचार होने लगा कि मेरे हाथों में पहले वैद्य की अपेक्षा ज़्यादा हुनर है । पर बिना वैद्यक-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किये मैं चिकित्सा करने में विश्वास नहीं रखता था । खैर, इस लिए मुझे कहीं जाने की ज़रूरत नहीं पड़ी । दूसरे, मुझे अपने परिवार का पेट भी पालना था । इसलिए कुछ न कुछ करना जरूरी था । मैं अब गांव छोड़कर चित्रपुर चला आया और मैंने अपनी जान-पहचान वालों से कोई काम दिलाने के लिए प्रार्थना की ।

"मुझे अपनी जान-पहचान का एक वैद्य मिल गया । कहने लगा, 'देखो सदानंद, मैं वैद्यक-शास्त्र की कई बारीकियां जानता हूं । इसके बावजूद मैं एक योग्य वैद्य के रूप में अपना नाम न बना सका । मेरी तो अब यह स्थिति है कि मैं तुम्हें दवाइयां पीसने का काम भी देने में समर्थ नहीं हूं । मैंने सुना था कि तुम्हारे हाथ में अच्छा हुनर है । इसलिए मैं

तुम्हें, जब तुम चाहोगे, अपना परामर्श देता रहूंगा । तुम अपने गांव में एक अच्छे वैद्य के रूप में नाम कमा चुके हो । मैं यहां प्रचार करूंगा कि हमारे यहां एक महान् वैद्य आया हुआ है । तुम्हारे पास अपने वाले रोगियों के रोग-लक्षण सुनकर उनकी चिकित्सा-विधि मैं बताया करूंगा । इस तरह मैं तुम्हें सहयोग देता रहूंगा । तुम इस तरह चिकित्सा से जो कुछ कमाओ, उसमें से बस थोड़ी-सी रकम मुझे दे दिया करना ।'

"मैंने यह प्रस्ताव मान लिया । 'ठीक है,' मैंने कहा, 'हम ऐसा ही करेंगे । लेकिन अगर मेरे अज्ञान से किसी रोगी को हानि पहुंची तो मैं चिकित्सा करना छोड़ दूंगा ।'

"उस दिन से जिन-जिन बारीकियों का मुझे

ज्ञान नहीं था, उनके बारे में मैंने दूसरे वैद्यों से भी, उन्हें पैसे देकर, ज्ञान प्राप्त किया । इस तरह मुझे बराबर इज्जत और साथ-साथ शोहरत मिलती गयी ।"

सदानंद की कहानी पूरी हो चुकी थी । अब वह श्रीमुख से बोला, "गुरु से सीखना एक बात है, पर यही सब जब दूसरे वैद्यों से सीखना पड़े तो उस पर बहुत खर्चा आता है । इसीलिए मेरे यहां जो रोगी आते हैं, उन्हें अपनी चिकित्सा के लिए ज़्यादा दाम चुकाने पड़ते हैं । मुझे अपने ज्ञान पर अब पूरा विश्वास भी है ।"

श्रीमुख ने भी अब सदानंद के सामने अपने मन की बात रख दी । पर सदानंद इस बात से दुःखी हुआ और बोला, "नहीं, नहीं, मुझे तुम्हारा यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं । मैं तुम्हें अपने सहायक के रूप में नहीं रख सकता । तुम तो मुनि दिव्यात्म के शिष्य हो । इसलिए तुम एक वर्ष तक मेरे पास ही रहो और मुझे परामर्श देते रहो । तभी मैं एक वैद्य के रूप में पूर्णता प्राप्त कर सकूंगा ।"

श्रीमुख ने अपनी सहमति दे दी, और उसी दिन से वह सदानंद के काम में पूरे मनोयोग से हाथ बंटाने लगा । सदानंद जिस ढंग से अपने रोगियों से पेश आता, वह श्रीमुख को बहुत अच्छा लगा ।

एक दिन सदानंद के पास एक रोगी आया और बोला, "श्रीमान्, आपने जो मुझे दवा दी, वह खूब काम कर रही है । भोजन के बाद नियमित रूप से उसे मैं ले रहा हूं ।"

रोगी की बात सुनकर श्रीमुख घबरा गया । बोला, "अगर चाहते हो कि यह दवा ठीक से काम करे तो तुम्हें इसे भोजन से आधा घंटा पहले या आधा घंटा बाद लेना चाहिए । तुम भूल कर रहे हो ।"

वह कुछ और भी कहने जा रहा था कि सदानंद बीच में ही बोल पड़ा, "आप चिंता मत करें । मेरा मित्र इस पेशे में नया-नया आया है । आप निश्चिंत होकर दो दिन तक दवा लेते रहें और फिर यहां आयें ।"

रोगी लौट गया । श्रीमुख ने सदानंद से कुछ कहना चाहा, लेकिन सदानंद ने उसकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया और अपने कक्ष में चला गया ।

दो दिन के बाद वह रोगी फिर आया । तब

सदानंद उससे बोला, "मैं आपकी दवा बदल रहा हूँ। यह दवा आपको भोजन के आधा घंटा पहले या आधा घंटा बाद लेनी होगी।"

जब रोगी लौट गया तो श्रीमुख सदानंद से बोला, "आपने दवा तो नहीं बदली, पर आपने अपनी गलती जरूर सुधार ली। यही बात जब मैंने दो दिन पहले बतायी थी तो आपने इस पर ग़ौर नहीं किया था। आप तो अपने रोगियों का भला चाहते हैं। फिर आप इस तरह का अहंकार क्यों पाले हुए हैं?"

श्रीमुख की बात सुनकर सदानंद ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। बड़े सहज ढंग से बोला, "मेरे रोगी को मुझ पर विश्वास था। उसे दवा देकर मैं उसे इसके सेवन की विधि बताना भूल गया था। इससे, निःसंदेह इस रोगी को कुछ नुकसान हो सकता था। लेकिन न जाने कैसे, इस दवा ने इस विधि से भी रोगी पर अच्छा असर किया। ऐसी हालत में यदि रोगी को यह पता चल जाता कि मुझसे गलती हुई है तो उसका मुझ पर से विश्वास उठ जाता और रोग के बढ़ने की आशंका भी बढ़ जाती। इसीलिए मैंने चाहा कि वह उस दवा को दो दिन और ले। हमारे पेशे में दवा से ज़्यादा रोगी का चिकित्सक पर विश्वास काम करता है। किसी भी हालत में मैं अपने रोगी का अपने पर से विश्वास गिरने देना नहीं चाहता था। दवा काम न करे तो गलती मान भी लें, पर जब दवा ठीक काम कर रही हो, तब गलती कैसी? अब मेरी बात तुम्हारी समझ में आ गयी होगी।"

श्रीमुख अपने हाथ उठाकर सदानंद के सामने नतमस्तक हो गया और बोला, "अब मेरी समझ में आया कि व्यावहारिक चिकित्सा और शास्त्रीय चिकित्सा के बीच क्या अंतर होता है। आपके सामने केवल आपके रोगी की भलाई ही होती है। आपको अपना नाम कमाने की कोई चिंता नहीं, आप मेरे आदर्श हैं।"

और यह कहकर श्रीमुख ने सदानंद से विदाई ली ताकि किसी दूसरे शहर में जाकर वह वहां एक अच्छे वैद्य के रूप में अपना नाम कमा सके।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी १९९२ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० नवम्बर '९१ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

सितम्बर १९९१ की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो : मिलने आये दूर से हम!

द्वितीय फोटो : मनाएं कैसे तुम को हम!!

प्रेषक : संतोष श्रीवास्तव, अरोरा कालोनी, भोपाल-४६२ ०१६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

सवाल बच्चों के भविष्य का ....

भला इतने प्यारे बच्चे
को कोई क्यों नुकसान
पहुंचाने लगा,
डैडी ?
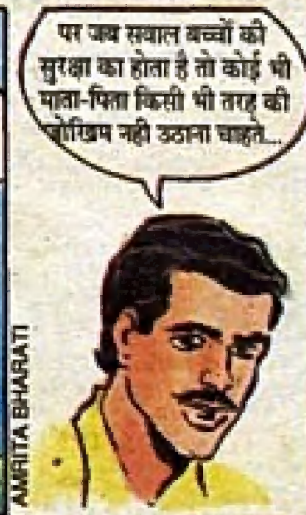
ठीक
कहती हो,
दीपा . . .

जीवन बीमा का कोई विकल्प नहीं

भारतीय जीवन बीमा निगम